thearyasamaj.org

R.N.I. No. 2321/57

ओ३म्

रजि. सं. MTR नं. 04/2013-15

फरवरी 2015

अंक 1

तपोभूमि

मासिक

'महाभारत के प्रेरक प्रसंग' पुस्तक का विमोचन करते हुए स्वामी रामदेव जी महाराज

thearyasamaj.org

सम्पादकीय–

सत्य का समर्थन न करना भी महापाप है

पवित्र वेद में सूक्ति है कि **सत्येन उत्तभिता भूमिः** अर्थात् यह भूमि सत्य के आधार पर स्थिर है। जब हम विचार करते हैं तब हम देखते हैं संसार कुछ अटल नियमों के आधार पर ही चल रहा है। पृथ्वी गंध दे रही है, जल शीतलता दे रहा है, वायु प्राण का आधार है, सूर्य प्रकाश दे रहा है। इसी प्रकार अन्य नियम भी प्रकृति के स्थिर और अटल हैं। यह बात सर्वथा सत्य है। इसीलिए हम निःसंकोच होकर प्रकृति के पदार्थों से उनके गुण अनुसार कार्य चलाते हैं। यदि ये नियम अपने में सत्य न हों तो सृष्टि का कोई भी व्यवहार चल नहीं सकता। सृष्टि के नियमों में अस्थिरता और अव्यवस्था सृष्टि को यथावत् कभी नहीं चलने देगी। ठीक इसी प्रकार मानव समाज में भी समाज को व्यवस्थित करने के लिए कुछ नियम व्यवहार में लाए जाते हैं। जिनसे मानव समाज व्यवस्थित रहता है। सबको समान रूप से शान्तिपूर्वक जीने का और विकास करने का सुअवसर प्राप्त होता है। व्यक्ति समाज की इकाई होता है। सर्वकल्याण के नियमों के प्रति विश्वसनीयता बनाये रखना ही सामाजिक जीवन में सत्यता कहाता है। इसी के आधार पर हमारे पारिवारिक जीवन से लेकर वैश्विक जीवन तक का अस्तित्व रहता है। इसी अस्तित्व को बनाए रखने के लिए सत्यता की आवश्यकता होती है। इसी सत्यता की रक्षा के लिए जिस शक्ति का लोगों ने परस्पर सहयोग से गठन किया है। उसी का नाम सरकार है। सरकार के अनेकों विभाग इसी सत्यता को बनाए रखने के लिए निरन्तर लगे हुए हैं। जिस दिन सामाजिक जीवन को व्यवस्थित रूप से चलाने वाले नियमों की सत्यता नष्ट हो जाएगी उस समय मानव की शान्ति ही नष्ट नहीं होगी अपितु चारों ओर ऐसा अराजकता का साम्राज्य स्थापित हो जाएगा। जो एक दुर्बल ही नहीं अपितु बलवान व्यक्ति का भी जीना मुश्किल कर देगा। इसी सत्यता को निरन्तर बनाए रखने के लिए हमारे मनीषियों ने बड़े उदार हृदय से यह घोषणा की थी कि–

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुःख भाग् भवेत्।

सभी सुखी हों, सभी निरोग हों, सभी उत्तम सुखों को देखें, कोई भी दुःखी न हो।

आज जो हमारे समाज के सामने लूटपाट, अत्याचार, व्यभिचार, छीना–झपटी, मारकाट का वातावरण उपस्थित है वह इसी कारण से है, कि हमने सामाजिक जीवन को बनाये रखने के लिए जिन सर्वहितकारी नियमों को स्थापित किया था, वे आपस के सत्य व्यवहार से ही सुदृढ़ हो सकते थे, और उन संस्कारों को आश्रय दिया जाता जो हमारे वैयिक्तिक स्वार्थों को पूरा करते थे। निश्चित रूप से जब स्वार्थपरता व्यक्ति पर हावी होती है तो वह सारी सत्य की मर्यादाओं को तोड़ डालता है। और अपने स्वार्थ के लिए सामाजिक जीवन की मर्यादाओं को छिन्न–भिन्न कर देता है। राष्ट्रकवि दिनकर ने ठीक ही लिखा है कि–

जब स्वार्थ मनुज की आंखों पर मांड़ी बनकर छा जाता है,
तब वो मानव से बड़े–बड़े दुश्चिन्त्य कृत्य करवाता है।

व्यक्ति की स्वार्थपरता ही समाज के सुन्दर ताने–बाने को छिन्न–भिन्न कर देती है। जिससे सर्वत्र

–शेष पृष्ठ सं. 35 पर

thearyasamaj.org

तपोभूमि

ओ३म् वयं जयेम (ऋक्0)

शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक कल्याण की साधिका

(आर्य जगत में सर्वाधिक लोकप्रिय मासिक)

वर्ष–61 संवत्सर 2071 फरवरी 2015 अंक 1

संस्थापक
स्व0 आचार्य प्रेमभिक्षु

संपादक:
आचार्य स्वदेश
मोबा. 9456811519

फरवरी 2015

सृष्टि संवत्
1960853115

दयानन्दाब्द: 190

प्रकाशक
सत्य प्रकाशन
आचार्य प्रेमभिक्षु मार्ग
मसानी चौराहा, मथुरा
(उ0 प्र0)
पिन कोड–281003

दूरभाष:
0565–2406431
मोबा. 9759804182

अनुक्रमणिका

लेख–कविता		पृष्ठ संख्या
वेदवाणी	–डॉ0 रामनाथ वेदालंकार	4
दयानन्द दिग्विजयम्	–आचार्य मेधाव्रत	5–8
प्रेम पंचादशी	–महात्मा कबीर	9
योगेश्वर कृष्ण	–पं0 चमूपति	10
श्रद्धात्रय तथा मोक्ष संन्यास योग	–डॉ0 सोमदेव शास्त्री	11–14
इस्लाम कैसे फैला	–प्रीतम अमृतसरी	15–18
सृष्टि–प्रलय–संवत्सरादि काल गणना	–महात्मा ओममुनि	19
मूर्खवर्ग	–श्रीबुद्धगीता से साभार	20–21
ईश्वर ने दुनियां क्यों बनाई	–पं0 रामचन्द्र देहलवी	22–25
अप्रिय अवस्थाओं से निकलने का मार्ग	–दयाचन्द्र गोयलीय	26–28
नींद क्यों नहीं आती	–डॉ0 सतीशचन्द्र मलिक	29–30
गूँगे नेत्र, अन्धी वाणी	–ब्रह्मदेवसिंह	30
राजा मणिचन्द्र की उदारता		31
महाराज रघुपतिसिंह		31
होश खोना हो तो पियो		32

❄ ❄ ❄

वार्षिक शुल्क 150/ पन्द्रह वर्ष के लिये शुल्क 1500/– रूपये

thearyasamaj.org

वेदवाणी

डॉ० रामनाथ वेदालंकार

सपत्नी–बाधन

इमां खनाम्योषधिं वीरुधां बलवत्तमाम्।
यया सपत्नीं बाधते यया संविन्दते पतिम्।। –अथर्व0 3.15.2

शब्दार्थ:–

(इमां ओषधिम्) इस ओषधि को (खनामि) खोदकर लाता हूँ, (वीरुधां बलपत्तमाम्) जो ओषधियों में स्त्री–चिकित्सा के लिए सबसे अधिक शक्तिशाली है, (यया) जिससे, पत्नी (सपत्नीं बाधते) सौत को बाधित कर देती है, अर्थात् स्वयं स्वस्थ तथा सन्तान उत्पन्न करने योग्य हो जाती है, जिससे घर में सौत को लाने की आवश्यकता नहीं पड़ती, (यया) जिस ओषधि से, पत्नी (पतिं संविन्दते) पति को, अर्थात् पति के प्रेम को पूर्णतः प्राप्त कर लेती है।

भावार्थ:–

पति दूसरी पत्नी घर में प्रायः तब लाता है, जब पत्नी में कोई शारीरिक दोष हो, जिससे वह सन्तान उत्पन्न न कर सकती हो। दूसरे विवाह के लिए वह उससे सहमति ले लेता है, अथवा उसकी सहमति के बिना भी दूसरी पत्नी घर में ले आता है। यदि पूर्व पत्नी से सन्तान होने की सम्भावना हो जाए, तो वह एक पत्नी के साथ रहने में ही प्रसन्नता मानेगा। प्रस्तुत मंत्र ऐसी ही स्थिति में लिखा गया है, जब पूर्व विवाहित पत्नी से सन्तान नहीं हो रही है, और सन्तान–प्राप्ति के इच्छुक पति–पत्नी दोनों हैं तथा उसके लिए कुछ उपाय करने आवश्यक हों तो उनके लिए भी वे तैयार हैं। कोई चिकित्सक नारी को किसी औषधि का सेवन करने का परामर्श देता है। पति इसके लिए तैयार है कि वह स्वयं वन में जाकर उस औषधि को खोदकर लायेगा और जैसा वैद्य ने बताया है वैसा उसका काढ़ा, चूर्ण या अन्य औषधियों के साथ संमिश्रण बनाकर अपने हाथों से पत्नी को सेवन करायेगा। मंत्र पति की ओर से कहा गया भी माना जा सकता है और चिकित्सक के द्वारा कहा गया भी। यदि पति की ओर से कहा गया है, तो इसका भाव यह होगा–"मैं वैद्य द्वारा बतायी गयी इस औषधि को स्वयं खोदकर लाऊँगा, जो वन्ध्यात्व–दोष की निवारक औषधियों में सबसे अधिक बलवती है, जिसका सेवन करके मेरी पत्नी पुत्रवती होगी, जिससे सपत्नी को लाने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी, जिस औषधि का सेवन करके मेरी पत्नी मुझ पति को फिर से पा लेगी।" मंत्र वैद्य की ओर से कथित होने पर यह भाव होगा–"मैं स्वयं इस औषधि को जंगल से खोदकर लाऊँगा, क्योंकि बाजारू औषधियों पर भरोसा नहीं किया जा सकता, वे पुरानी हों तो बेअसर भी हो सकती हैं। वन्ध्यात्व की यह औषधि इस दोष के निवारणार्थ सर्वाधिक बलवती है, और जैसा दोष इस बहिन को है उसके लिए तो यह लाजबाब है। इससे सन्तानवती होकर यह निश्चय ही सौत को घर में नहीं आने देगी और पति इससे जो खिंचा–खिंचा सा रहने लगा है, उसकी अपने में रुचि को यह पुनः प्राप्त कर लेगी।" ❁❁❁

thearyasamaj.org

गतांक से आगे–

दयानन्द दिग्विजयम्

लेखकः आचार्य मेधाव्रत

एकादशः सर्गः

वाल्मीकिः प्राक् कविकुलगुरु माननीयो महर्षिर्लोकालेक्यां सुरगिरमिमां लौकिकच्छन्दसा त्वाम् ।
सारस्निग्धै मधुरमधुरै र्वाड्मयोरर्चयन् सन् प्रापल्लोके कविषु महतीं पूजनीयां प्रतिष्ठाम् ।। 48।।

प्राचीनकाल में कविकुलगुरु माननीय महर्षि वाल्मीकि ने लौकिक छन्दों द्वारा इस सुरवाणी को, अतिमधुर, सारगर्भित काव्यों से अर्चन करते हुए लोक में प्रकाशित कर दिया, जिससे ये संसार में महती पूजा के पात्र बने।। 48।।

भुवि भाभिरम्ब विभासितः कविभास एष विभासते, कवितावितानविधायिनी कविकालिदासविलासता।
भवभूतिरंग विभूतिमाँस्तव कीर्त्तिमेव ततान तांसमपूजयन्नितरां गिरा कविभारविस्तव भारविम्।। 49।।

हे माता, अपनी प्रतिभा की प्रभा से कविवर भास संसार में भासित हो रहे हैं। कविसम्राट् कालिदास की कविता–माधुरी कवितारूपी चँदौबा के तानने में अनुपम है। भवभूति की काव्य–विभूतियाँ भी तुम्हारी ही कीर्त्ति फैला रही हैं और कविवर भारवि ने तुम्हारी ही ओजस्विनी वाणी की अर्चना की है।। 49।।

सति नरपतिने विक्रमादित्यवीरे वररुचिनवरत्नं शासति प्राज्यराज्यम्।
जननि वरमखण्डं ताण्डवं नाटयन्ती वदनसदनरंगं प्रालसो मण्डयन्ती।। 50।।

जब नृपतिवर वीर विक्रमादित्य विशाल साम्राज्य का शासन कर रहे थे, तब वररुचि आदि नवरत्न इनकी राज्य–सभा में चमक रहे थे। उस समय हे माता! तुम प्रत्येक कवि के मुखरूपी भवन की रंगशाला को अखण्ड नृत्य से मण्डित कर रही थीं।। 50।।

भोजे भूते जनपतिमणौ त्वत्पदाम्भोजभृंगे ग्रामे ग्रामे विलसति बुधग्रामणीग्राम इत्थम्।
त्वत्साहित्योपवनपवनै र्वीज्यमानो रसार्द्रैस्तप्तस्वान्तं शमयति भवक्लेशजालैः स्मे लोकः।। 51।।

तेरे चरण–कमल के भ्रमर राजशिरोमणि भोज जब राज्य कर रहे थे, तब एक एक ग्राम में विद्वानों की मण्डलियाँ विराज रही थीं। उस समय जनता भवताप से संतप्त अपने अंतःकरणों को वाङ्मयरूप उपवन के शीतल मन्द सुगन्धित समीरण से शान्त करती थी।। 51।।

भाषोत्तंसे ! त्वदमृतसरः सूक्तिमुक्ताभिरामं कामं काम्यं बुधवरगणा हंसलीलायमानाः।
दुष्प्रापं तद् विमलमतयः प्राप्य ते पुण्यवन्तः सन्तः सन्ति प्रथितयशसो धन्यधन्या अवन्याम्।। 52।।

हे भाषाओं में भूषणरूपा देववाणी, हंस के समान आचरण करते हुए, पुण्यशाली विमलमति

thearyasamaj.org

विद्वन्मण्डल, सूक्तिरूपी मुक्तावलियों से मण्डित, चाहने योग्य, तेरे दुर्लभ अमृत सरोवर को पाकर संसार में धन्य-धन्य एवं यशस्वी बन रहे हैं॥ 52॥

इत्थं प्रसादगुणगुम्फितरम्यभावैः पद्यैः प्रसाद्य मधुरैः सुरवन्द्यवाणीम्।
पुण्यार्यभूमिजननीं जननीगुणज्ञः प्रोवाच सान्त्वनमयीं शुभवाचमेवम्॥ 53॥

इस प्रकार महर्षि दयानन्द ने प्रसाद-गुणयुक्त रम्य भावों वाले मधुर पद्यों से देव वन्दनीय देववाणी को प्रसन्न किया। पश्चात् जन्मभूमि के गुणों के ज्ञाता ऋषिवर पवित्र आर्यभूमि को उद्देश करके निम्नलिखित सान्त्वनादायक शुभवाणी से सान्त्वना देने लगे॥ 53॥

मातर्महेश्वरसमर्पितरत्नगर्भे ! पुण्यात्मरन्तजनयित्रि सुपुण्यभूमे ! ।
चारित्र्यवत्सलसुवत्सपवित्रितांगे ! त्वां के नमन्ति न जनाः सुपवित्रितांगे ! ॥ 54॥

हे माता ! आपके अन्दर जगत्स्रष्टा ने पुष्कल रत्न भर दिये हैं। तुम पुण्यात्माओं की जन्मदात्री जन्मभूमि हो। तुम्हारी गोद को चरित्रशील पुत्रों ने पवित्र किया है, अतः तुम पवित्रांगिनी हो। इसलिये तुम किसकी वन्दनीय नहीं ? ॥ 54॥

मातः कथं तव मुखं मलिनांगुजश्रि श्रीले तवाक्षियुगलं कथमश्रुवर्षि ! ।
गात्रं बिभर्षि कृशमंग कथं वदान्ये ! पश्यामि हा तव दशामतिशोचनीयाम्॥ 55॥

हे माता ! तुम्हारा मुखकमल कान्तिविहीन क्यों है? आंखें अश्रु-वर्षा क्यों कर रही हैं। हे दानशीले तुम्हारा शरीर कृश क्यों है? हा ! इस समय तुम्हारी बड़ी शोचनीय दशा देख रहा हूँ॥ 55॥

मा त्वं विषीद जनयित्रि पवित्रवृत्ते ! स्वीयां निभाल्य कुदशां क1दशानभिज्ञे ! ।
कस्यानिशं भुवि दशा परिणामशीला दृष्टा सुशीलवति ! सा सुनिबद्धमूला॥ 56॥

हे पवित्रचरित्रे जननि ! अपनी दुर्दशा देखकर खिन्न मत हो, हे सुन्दरशीले ! संसार में किसकी दशा एक सी रही है, जो तुम्हारी रहेगी॥ 56॥

जाता ऋषीन्द्रमुनिपुंगवविज्ञवर्यास्त्वय्येव देवि निगमागमतंत्रविज्ञाः।
येषां यशोभिरमलैः समाशोभि विश्वं प्रागेव दर्शनकृतामधुनाऽपि रम्यम्॥ 57॥

हे जन्मभूमे ! निगमागम शास्त्रों के ज्ञाता विद्वान् ऋषिमुनि पुंगव पुरातन युग में तुम्हारी ही कोख से पैदा हुए थे, जो बड़े-बड़े महान् दर्शनों के रचयिता थे और जिनकी पवित्र कीर्त्ति से आज भी सारा संसार शोभित हो रहा है॥ 57॥

शिक्षां तवैव समवाप्य गुणानभिज्ञाविज्ञा बभूवुरितरे नितरामसभ्याः।
तां सभ्यतां समधिगम्य तपोवकण्ठान्मातः समुन्नतिपथं ययुरन्यदेशाः॥ 58॥

हे माता ! गुणदोष की परीक्षा से अनभिज्ञ, असभ्य विदेशी तुम्हारी ही शिक्षा एवं संस्कृति को पाकर उन्नति-मार्ग के पथिक बने॥ 58॥

प्रागम्ब सोऽश्वपतिभूपतिरात्मराज्ये स्तेयं न मे जनपदे न कदर्यतास्ति।
नाधार्मिकोऽपि जन एवमवेक्ष्यतां तद् दर्पं चकार पुरतो विदुषामृषीणाम्॥ 59॥

thearyasamaj.org

हे माता ! पूर्वकाल में तुम्हारे गर्भ से अश्वपति जैसे राजा पैदा हुए थे, जो विद्वान् ऋषियों के आगे अभिमानपूर्वक कह सकते थे कि–हे ऋषियो ! मेरे देश में चोरी, कृपणता, एवं अधार्मिकता आदि दोष नहीं हैं॥ 59॥

नो विद्यते नृपवरो धरणीतलेऽस्मिन्नित्थं प्रवक्तुमधुना प्रभुरेव कोऽपि।
प्राप्तेऽपि सुन्नतिपदं विषये स्वकीये मात र्विषीदसि कथं त्वमये मुधैवम्॥ 60॥

हे माता ! आज इस विज्ञानयुग में भी प्राकृतिक उन्नति की चरम सीमा पर पहुँचा हुआ एक भी कोई देश नहीं है कि जहाँ का सम्राट् अश्वपति राजा की तरह अभिमानपूर्वक घोषणा कर सके। तो तुम आज अपनी इस अवनति के कारण व्यर्थ ही क्यों दुःखित हो रही हो॥ 60॥

जानाति किं न जननी जनकेश्वरं तं राजर्षिवर्यमखिलागमदर्शनज्ञम्।
वेदोदितेन सुपथा प्रकृतीरवन्तं शान्त्या स्वराज्यममलं परितोषयन्तम्॥ 61॥

हे जननी ! क्या तुम राजा जनक को भूल चुकी हो, जो राजा होते हुए भी परमशास्त्रज्ञ और ब्रह्मवेत्ता राजर्षि थे। ये राजा वेदानुकूल शुभमार्ग पर चलते हुए प्रजा को भी उन्नति–शिखर पर आसीन कराते थे, और इस प्रकार शान्ति से अपने स्वराज्य का शासन करते थे॥ 61॥

राजा प्रजा इव निजाः प्रकृतीः स मेने प्राङ् मेनिरे नरपतिं पितरं प्रजाश्च।
धर्मेण राष्ट्रमखिलं परिपालयन्तसन्नादर्श एष समभूत्तव सन्ततीनाम्॥ 62॥

प्राचीनकाल में राजा लोग अपनी प्रजा को पुत्र की तरह मानते थे। प्रजा भी राजा को पितृतुल्य मानती थी। इस प्रकार धर्मपूर्वक अखिल राष्ट्र का पालन और संचालन होता था। यह था आदर्श तुम्हारी सन्तानों का ! ॥ 62॥

आप्तस्त्वदंकमयि देवि स कृष्णचन्द्रः पुत्रोत्तमो गुरुकुले कृतसंनिवासः।
यस्याधुनापि सुयशोहरिणांक एषआनन्दयत्यतितरां वसुधामशेषाम्॥ 63॥

हे दिव्यमातृभूमि, आप ही के सुपुत्र श्रीकृष्णचन्द्रजी, जिन्होंने तुम्हारी गोद को शोभित किया था। ये सान्दीपन गुरु के आश्रम में रहकर सम्पूर्ण विद्या एवं कलाओं में निपुण हो गये थे। उनका यशश्चन्द्रमा अब भी सम्पूर्ण पृथिवी को आनन्दित कर रहा है॥ 63॥

सब्रह्मचारिणामयं नृपतिः सुदामनामानमात्मगृहमागतवन्तमन्ब !।
दारिद्र्यदुःखविकलं कृतवान् प्रसन्नं दत्वा धनादिकममुं निजबन्धुतुल्यम्॥ 64॥

सुदामा नामक ब्राह्मण भी श्रीकृष्णचन्द्र के साथ पढ़ते थे। गृहस्थ होने पर जब इन्हें दारिद्र्य ने आ सताया तब अपने बन्धु के समान सत्कारादि द्वारा धन देकर इन्हें श्रीकृष्ण ने संतुष्ट कर दिया था॥ 64॥

शिक्षैव सा गुरुकुलोषितवर्णिराजां सम्पूर्णवेदाविहितागमबोधभाजाम्।
यन्मानवा अनुबभूवुरतीव सौख्यं सर्वं जनं निजजनं भुवि मन्यमानाः॥ 65॥

सम्पूर्ण वेद एवं शास्त्रों के ज्ञान को धारण करने वाले गुरुकुलीय ब्रह्मचारीगण का तो यह आदर्श ही था कि वे संसार में मानव मात्र को निज जन ही मानते थे, और इसी कारण मानव जाति अतिशय

thearyasamaj.org

सुख का अनुभव करती थी॥ 65॥

मातस्त्वया न जनिताः कति नाम पुत्राविद्यावतां बलवतां गुणिनां वरेण्याः।
यत्सन्निभा न जनिता भुवि कैश्चिदन्यैर्देशैरतो वदनमिन्दुसमुज्ज्वलं ते।। 66।।

हे माता मातृभूमि ! तुमने अनेकों बलवान्, गुणवान्, विद्वान्, संतानों को पैदा किया है, जिनके समान संसार में किसी देश ने पैदा नहीं किये, इसलिये तुम्हारा मुख चन्द्रमा समुज्वल है॥ 66॥

ईदृक्षास्ते त्वयि समभवन् ब्रह्मचारीन्द्रसंघायेषामग्रे नृपतिमणयोऽप्यम्ब ! नम्रोत्तमांगाः।
एतादृक्षे तव सति बले वन्दनीये ! प्रसोतुं शोकग्रस्ता भवसि नु कथं पुत्ररत्नं नृरत्नम्।। 67।।

हे वन्दनीय दिव्यभूमि, तुम्हारे में ऐसे-2 श्रेष्ठ ब्रह्मचारी हो चुके हैं, जिनके आगे सम्राट् भी झुकते थे, ऐसे नरकेसरी पुत्ररत्नों के जन्म देने की शक्ति रखती हुई भी तुम क्यों शोकसागर में डूब रही हो?॥ 67॥

वन्द्यार्यभूमिजननीगुणगानलीनोविश्वेशवेदसुरगीस्तवनात्तवीर्यः।
वेदार्थतत्वमणिदातृगुरूत्तमानां पुण्योपकारममलेन हृदाऽस्तुतायम्।। 68।।

वन्दनीय जननी आर्यभूमि के गुणगान में लीन, ईश्वर, वेद एवं देववाणी के स्तवन से उत्साहित ऋषिवर, वेदों के अर्थ-तत्वरूप रत्नों के प्रदाता अपने गुरुदेव के पुण्य उपकारों को स्मरण करके भक्तिपुरस्सर स्तुति करने लगे॥ 68॥

आचार्यरत्नांघ्रियुगारविन्दं वन्दे पवित्रं प्रमुदा प्रणम्रः।
यस्य प्रसादात् प्रतिपद्य विद्याचिन्तामणिं मे सफलोऽवतारः।। 69।।

मैं भक्ति से आनन्दपूर्वक आचार्य देव के पवित्र चरण-कमल-युगल की वंदना करता हूँ, जिनकी कृपा से विद्यारूपी चिन्तारूपी-रत्न पाकर मेरा जन्म सफल हो गया॥ 69॥

देहोदभवं तौ पितरौ प्रदाय देहस्य पुष्टिं कुरुतः परं ताम्।
वितीर्य विद्यां गुरुरात्मनीनामात्मोन्नतिं ब्रह्मद आतनोति।। 70।।

माता पिता तो जन्म देकर केवल देह का ही पालनपोषण करते हैं, किन्तु आत्मकल्याणकारी ब्रह्मदाता गुरुदेव तो विद्याओं को प्रदान कर आत्मा की सर्वांगीण उन्नति करते हैं॥ 70॥

आर्षज्ञानमहादीपो मह्यं दत्तो महात्मना।
पाखण्डिनां तमोग्रन्थान् येन नेष्ये प्रकाशताम्।। 71।।

महात्मा विरजानन्दजी ने मुझे आर्षज्ञानरूपी महान् दीप प्रदान किया है, जिससे पाखण्डियों के तमोमय ग्रन्थों को मैं प्रकाश में लाऊँगा॥ 71॥

ज्ञानरत्नाकरादात्मा लब्ध्वा मे मेघवद्रसान्।
जनतोपकृतौ सज्जो जीवनार्पणनिर्णयः।। 72।।

ज्ञान के महासागर समान गुरु से मेघसमान मेरा आत्मा रसरूपी जलों को ग्रहण करके जनता के उपकारार्थ जीवनरूपी जल के समर्पण के लिये निर्णय कर चुका है॥ 72॥

-(शेष अगले अंक में)

thearyasamaj.org

प्रेम-पंचदशी

रचयिताः महात्मा कबीर

प्रेम न बाड़ी उपजै, प्रेम न हाट बिकाय।
राजा परजा जेहि रुचै, सीस देइ लै जाय॥ 1॥

छिनहिं चढ़े छिन ऊतरै, सो तो प्रेम न होय।
अघट प्रेम-पिंजर बसे, प्रेम कहावै सोय॥ 2॥

प्रेम प्रेम सब कोइ कहै, प्रेम न चीन्है कोय।
आठ पहर भीना रहै, प्रेम कहावै सोय॥ 3॥

जब मैं था तब गुरु नहीं, अब गुरु हैं हम नाहिं।
प्रेम गली अति साँकरी, तामें दो न समाहिं॥ 4॥

जा घट प्रेम न संचरै, सो घट जान मसान।
जैसे खाल लुहार की, साँस लेत बिन प्रान॥ 5॥

प्रेम तो ऐसा कीजियो, जैसे चन्द चकोर।
घींच टूटि मुइँ माँ गिरै, चितवै वाही ओर॥ 6॥

जहाँ प्रेम तहँ नेम नहिं, तहाँ न बुद्धि व्यौहार।
प्रेम मगन जब मन भया, कौन गिनै तिथि वार॥ 7॥

प्रेम छिपाया ना छिपै, जा घट पर घट होय।
जो पै मुख बोलै नहीं, नैन देत हैं रोय॥ 8॥

पिया चाहे प्रेम-रस, राखा चाहै मान।
एक म्यान में दो खड़ग, देखा सुना न कान॥ 9॥

कबिरा प्याला प्रेम का, अन्तर लिया लगाय।
रोम रोम में रमि रहा, और अमल क्या खाय॥ 10॥

नैनों की करि कोठरी, पुतली पलँग बिछाय।
पलकों की चिकडारी के, पिय को लिया रिझाय॥ 11॥

-शेष पृष्ठ सं. 21 पर

thearyasamaj.org

गतांक से आगे –

योगेश्वर कृष्ण

महाभारत का युद्ध–प्रकार

लेखकः पं. चमूपति

उभय पक्ष की सेनाओं में जातियों के विभाग के देखने से पता लगता है कि सारा भारत इस युद्ध में सम्मिलित था। कुछ जातियाँ दोनों ओर बँटी हुई थीं, यथा दशार्ण और शैव्य प्रथम दिवस ही पाण्डवों में भी हैं, कौरवों में भी। नारायण, जिनका दूसरा नाम गोपाल था, पाण्डवों की ओर से भी लड़ रहे थे, कौरवों की ओर से भी। इसका कारण कई अवस्थाओं में तो यह होगा कि कई जातियाँ भिन्न–भिन्न स्थानों पर एक ही नाम से बस रही थीं। हो सकता है, उसी नाम के एक राष्ट्र ने पाण्डवों का पक्ष लिया हो, और एक राष्ट्र ने कौरवों का। वृष्णियों की सहानुभूति, जैसे हम पहले कह आए हैं, दोनों पक्षों में बँटी हुई थी। नारायण सेना का कुछ भाग सात्यकि आदि के साथ पाण्डव–दल में जा मिला। इन्हीं की गणना भीष्म द्वारा मथित सेनाओं में की गई है। शेष कृतवर्मा आदि के साथ कौरवों से जा मिले थे। इन्होंने संशप्तकों से मिलकर अर्जुन को मुख्य युद्ध से अलग एक पृथक् मुठभेड़ में लगा रखा था। कृतवर्मा की नायकता में इनका नाम विशेष प्रकार से भी महाभारतकार ने गिनाया है। मुख्य योद्धा तो प्रतिदिन लड़ते थे, परन्तु सेनाओं को किसी दिन युद्ध, किसी दिन विश्राम करने दिया जाता था। प्रत्येक दिन के लड़नेवाले दलों की सूचियाँ पढ़ने से यह बात पूर्णतया स्पष्ट हो जाती है।

साधारणतया दिन ही को लड़ाई होती थी, परन्तु जयद्रथ के वध से बिगड़ उठे द्रोण ने रात को भी युद्ध जारी रक्खा था। उस युद्ध के लिए प्रदीपों का प्रबन्ध किया गया था। कौरव–दल में प्रत्येक रथ पर पाँच प्रदीप, प्रत्येक हाथी पर तीन और प्रत्येक घोड़े पर एक प्रदीप जलाया गया। पाण्डव–पक्ष में प्रत्येक हाथी पर 7, प्रत्येक रथ पर 10, प्रत्येक घोड़े पर दो प्रदीप, इनके अतिरिक्त आगे–पीछे इधर–उधर प्रदीप–ही–प्रदीप दिखाई देते थे। ये प्रदीप सुगन्धित तेल से जलाए गए थे और पदातियों ने उन्हें पकड़ रक्खा था। दुर्योधन ने हथियार छुड़वाकर उनके हाथों में प्रदीप पकड़वा दिये थे।

दूत की हिंसा वर्जित थी। यह अपने राजा ही का मुख समझा जाता था और उसे अपना सन्देश निर्भीकता से सुनाने की खुली छुट्टी थी। मर रहे, संकट में पड़े, निस्सन्तान, शस्त्रहीन, टूट गई ज्यावाले तथा मर गए घोड़ोंवाले शत्रु को मारना भी निषिद्ध थी। जिसके व्रण हो गया हो उसकी चिकित्सा या तो

–शेष पृष्ठ सं. 21 पर

thearyasamaj.org

श्रद्धात्रय तथा मोक्ष संन्यास योग

लेखकः डॉ० सोमदेव शास्त्री, मुम्बई

त्याग और संन्यास का लक्षणः-

इस अध्याय के प्रारम्भ में अर्जुन श्रीकृष्ण से पूछता है कि संन्यास और त्याग का क्या लक्षण है? उसको समझाते हुए श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि हे अर्जुन! बुद्धिमान लोग काम्य कर्मों के त्याग को संन्यास कहते हैं तथा सब कर्मों के फलों के त्याग को विद्वान् लोग त्याग कहते हैं। अर्थात् कामना, इच्छा, फल की आकांक्षा को लेकर किये जाने वाले कर्मों को छोड़ देना संन्यास है तथा कर्म तो अवश्य करना है किन्तु **कर्म के फल का त्याग देना ही 'त्याग' कहलाया है।** फल की आकांक्षा या आसक्ति का त्याग ही वास्तविक त्याग है। क्योंकि बिना कर्म के मनुष्य क्षण भर भी नहीं रह सकता है। वह कुछ न कुछ कर्म अवश्य करता है। इस विषय में लिखा है कि 'किसी भी मनुष्य के लिये कर्मों का पूर्ण रूप से त्याग करना संभव नहीं परन्तु जो कर्म के फल को त्याग देता है वही त्यागी कहलाता है। कर्मों में भी दोषयुक्त कर्म के त्याग का उल्लेख मिलता है कि **'यज्ञ, दान, तप** तो विद्वान् को भी पवित्र कर देते हैं। ये तीनों कर्म भी मनुष्य को त्याग के मार्ग पर चलने की प्रेरणा देते हैं, ये मनुष्य को कर्मयोगी निष्काम कर्म करने वाला वास्तविक अर्थों में **'सच्चा त्यागी'** बनाते हैं इसलिये ये कर्म आवश्यक कर्म बताये हैं। इनका त्याग नहीं करना चाहिये।

फल की प्राप्ति के पांच कारणः-

विवेकशील व्यक्ति कर्म के फल के प्रति आसक्ति को क्यों छोड़ देता है इस विषय में विवेचन करते हुए गीता में लिखा है कि फल की प्राप्ति में केवल कर्म करनेवाले का कर्म ही नहीं होती है अपितु इसके अतिरिक्त चार कारण और भी होते हैं अर्थात् **फल की प्राप्ति में पांच कारण** होते हैं जिनका उल्लेख करते हुए लिखा है कि कार्य का **स्थान, कर्ता,** भिन्न-भिन्न प्रकार के **साधन,** भिन्न-भिन्न प्रकार की **चेष्टाएं** तथा पांचवां **भाग्य दैव** अर्थात् वह कारण जो हमारी समझ से बाहर है जिसे हम नहीं जानते हैं, ये पांच कारण कर्म फल की प्राप्ति हेतु है। किसी भी कार्य के सफल होने में कार्य करने वाले के परिश्रम के अतिरिक्त, स्थान भी होना चाहिये, जहां पर मनुष्य कार्य कर सके, स्थान के अतिरिक्त उसको काम करने के अन्य साधन या सहयोग भी तो चाहिये, इसके अलावा विविध प्रकार की क्रियाएं जिसके द्वारा वह उस कार्य में पूर्ण सफलता प्राप्त कर सके तथा इतना सब कुछ होने पर उसका प्रारब्ध अर्थात् फल प्राप्ति में उसका भोग, ये सब मिलते हैं तभी कर्म का फल प्राप्त होता है। इनमें से एक की भी न्यूनता होने पर या न होने पर फल प्राप्ति में बाधा हो सकती है, फल नहीं मिल सकता है। इस प्रकार विवेकशील बुद्धिमान् व्यक्ति निर्णय करता है कि **कर्म के फल में मेरा योगदान** तो केवल **पांचवा हिस्सा** है। इसलिये

thearyasamaj.org

मैं अकेला ही फल प्राप्ति में अधिकार नहीं रख सकता, जब तक शेष चार अन्यों का योगदान नहीं होगा तब तक फल नहीं प्राप्त होगा। इसलिये कर्म के फल की आसक्ति–आकांक्षा का त्याग कर देता है। अपने अहं को त्याग कर निष्काम कर्म करने में प्रवृत्त हो जाता है।

त्रिविध ज्ञान कर्म बुद्धि आदिः–

ज्ञान कर्मादि, सात्विक, राजसिक, तामसिक, तीन प्रकार के होते हैं। सात्विक ज्ञान के बारे में गीता में लिखा है कि ''जिस ज्ञान के द्वारा मनुष्य सब भूतों में अर्थात् जड़ चेतन (जगत्) में एक ही अविनाशी सत्ता (ब्रह्म) को देखता है। जिस ज्ञान के द्वारा विभक्तों में भिन्न–भिन्न पदार्थों में अविभक्त (एक ब्रह्म) को देखता है उस ज्ञान को सात्विक ज्ञान समझो। ज्ञान की सात्विकता यही है कि सब जगह सर्वव्यापक ब्रह्म का मनुष्य अनुभव करे। वह सब स्थानों में सभी प्राणियों में विद्यमान है यह जानकर अपने कर्म किया करे।

जो शास्त्र विहित कर्म हैं अर्थात् सभी वर्णों और आश्रमवासियों के लिये जो आवश्यक कर्म है जो करना, आसक्ति और रागद्वेष से रहित तथा फल की इच्छा से रहित जो कर्म किया जाता है वह कर्म **सात्विक कर्म** कहलाता है। जो अहंकार की बातें नहीं करता है, जो कर्ता आसक्ति से मुक्त है, जो धैर्य और उत्साह युक्त है, जो सफलता और विफलता में निर्विकार रहता है, वह **सात्विक कर्ता है**। सात्विक कर्म और कर्ता के बारे में गीताकार ने वर्णन किया है, इतना ही नहीं अपितु राजसिक तथा तामसिक कर्म या कर्ता कैसा होता है यह भी स्पष्ट किया है।

इसके बाद सात्विक बुद्धि का वर्णन करते हुए लिखा है कि हे अर्जुन! जो बुद्धि **प्रवृत्ति मार्ग** और **निवृत्ति मार्ग** के भेद को समझती है। जो करने योग्य कार्य और न करने योग्य कार्य में भेद कर सकती है, जो इस बात को समझती है कि किससे डरना चाहिये और किससे नहीं डरना चाहिये? कौनसी वस्तु आत्मा को बन्धन में डालती है? और कौनसी बन्धन से छुड़ा देती है? जब ऐसी बुद्धि होती है तब वह **सात्विक बुद्धि** होती है। अर्थात् बुद्धि की सात्विकता के कारण ही मनुष्य को सत्य और असत्य का, करने योग्य कर्म तथा न करने योग्य कर्म का, शरीर और आत्मा के पृथक्–पृथक् होने का बोध हो जाता है जब उसे पाप या बुरे कार्य से डरना चाहिये। पुण्य, धर्म, सत्य और न्याय के मार्ग पर चलने से नहीं डरना चाहिये यह अनुभव सात्विक बुद्धि से होता है।

सात्विक और राजसिक सुखः–

सात्विक और राजसिक सुख में क्या अन्तर है इसका वर्णन करते हुए गीता में लिखा है कि जो **सुख प्रारम्भ में विष** जैसा प्रतीत होता है और **अन्त में अमृत** समान होता है वह **सात्विक सुख** होता है तथा जो सुख विषय तथा इन्द्रियों के संयोग से उत्पन्न होता है शुरु में अमृत के समान तथा **परिणाम में विष** के समान होता है वह राजसिक सुख होता है। सात्विक और राजसिक सुख में यही भिन्नता है कि सात्विक सुख पहले कष्टदायक और अन्त में अमृत के समान सुखदायक होता है। जब की राजसिक सुख

thearyasamaj.org

पहले सुखकारक लगता है। इन्द्रिय विषयों के संयोग से प्राप्त होता है किन्तु अन्त में इसका परिणाम विष जैसा दुःखदायी होता है।

ब्रह्मणादि वर्णों के कर्मः–

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यादि वर्णों के कर्मों का उल्लेख (18-42-44) श्लोकों में करके गता में लिखा है कि अपने कर्म में जो व्यक्ति लगा रहता है वह सिद्धि अर्थात् सफलता को प्राप्त करता है। प्रत्येक वर्ण का अपना धर्म अर्थात् शास्त्र विहित कर्म होता है जैसे ब्राह्मण का कर्म अध्ययन अध्यापनादि, क्षत्रिय का राष्ट्ररक्षा तथा वैश्य का कृषि गोपालन व्यापारादि कर्म करना, ये इनका स्वधर्म है। गीताकार लिखता है कि प्रत्येक वर्ण (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र) का अपना धर्म अर्थात् कर्म है।

यदि कोई वर्ण अपने कर्तव्य का ठीक तरह से पालन न कर सके और दूसरे वर्ण के कर्म को आसानी से कर सके तब भी उसे अपने स्वधर्म अर्थात् वर्णस्थ कर्म को ही करना चाहिये। जैसे ब्राह्मण का कर्म पढ़ाना, यज्ञ कराना आदि है, इसमें उसे धन प्राप्ति की कम संभावना लगती है और व्यापारादि वैश्य के कर्म से धनार्जन अधिक हो सकता है यह सोचकर ब्राह्मण वैश्य कर्म करने लगेगा तो उस कर्म में उतनी सफलता नहीं मिलेगी जितनी एक वैश्य को व्यापारादि कर्म में मिलती है। इसीलिये कहा है कि अपना काम कठिन लगे फिर भी अपने स्वभाव के अनुसार अपने वर्ण का निर्दिष्ट कर्म ही करना चाहिये। अपने स्वभाव के अनुसार स्वधर्म, कर्म को करते हुए मनुष्य ने जब सब ओर से अर्थात् आसक्ति का त्याग कर दिया है, मन को जीत लिया है, जिसने कामनाओं का त्याग कर दिया है वह इस प्रकार के संन्यास द्वारा परम सिद्धि को प्राप्त कर लेता है। **आसक्ति को सर्वथा छोड़ देना ही संन्यास कहलाता है** और इसी से परमसिद्धि मोक्ष की प्राप्ति होती है।

श्रीकृष्ण ईश्वर नहींः–

श्रीकृष्ण ने अर्जुन के मोह को विविध उपायों के द्वारा दूर करने का प्रयत्न किया है। कहीं–कहीं श्रीकृष्ण के द्वारा कहे गये वाक्यों से ऐसा लगता है कि श्रीकृष्ण स्वयं भगवान्–परमेश्वर हैं। यह भ्रान्ति गीता के स्वाध्याय करनेवाले व्यक्ति को न हो जाय इस दृष्टि से गीता के इस अध्याय में स्पष्ट किया है कि **श्रीकृष्ण ईश्वर या परमात्मा नहीं है** अपितु परमात्मा श्रीकृष्ण से पृथक् है। श्रीकृष्ण के द्वारा यदि कहीं ऐसा वाक्य कहलाया गया है तो वह परमात्मा की ओर से कह रहे हैं न कि वे स्वयं परमात्मा है। परमात्मा के विषय में गीता के 15वें अध्याय में 'क्षर–अक्षर और पुरुषोत्तम' के द्वारा स्पष्ट किया है कि **प्रकृति–जीवात्मा** और **परमात्मा** ये **तीन अनादि तत्व** भिन्न–भिन्न हैं। पुनरपि अन्त में स्पष्ट करते हुए श्रीकृष्ण अर्जुन से कह रहे हैं कि "हे अर्जुन ! ईश्वर सभी प्राणियों के हृदय में बैठा हुआ है और वह उनको इस प्रकार घुमा रहा है जैसे मानो वे सभी प्राणी किसी यन्त्र पर चढ़े हुए हैं। हे अर्जुन ! तू सर्व भाव से अर्थात् पूरी तरह से एकाग्र मन होकर उस ईश्वर की ही शरण में जा। उसकी कृपा से ही तुझे परमशान्ति, शाश्वत सुख प्राप्त होगा।"

सभी के हृदय में परमात्माः–

यहाँ पर स्पष्ट किया है कि जो परमेश्वर सभी के हृदय में विद्यमान है सभी प्राणियों को अपनी

thearyasamaj.org

कर्म व्यवस्था के अनुसार चला रहा है कोई भी उसके अनुशासन का या नियमों का उल्लंघन नहीं कर सकता है। कोई कितना ही शक्तिशाली और वैभवसम्पन्न व्यक्ति क्यों न हो किन्तु वह सृष्टि में ईश्वर के बनाये नियमों को चैलेंज (उनका उल्लंघन) नहीं कर सकता कि ''मैं नहीं मरूंगा या मैं इस समय युवा हूँ तो आगे भी हमेशा ही युवा बना रहूंगा। कभी भी वृद्ध या बूढ़ा नहीं होऊंगा। मैं आंख से देखने की अपेक्षा मैं तो कानों से देखने का कार्य करूंगा आदि-आदि। वह ईश्वर है जो सबको ऐसे मनमानी नहीं करने देता है। इसलिये हे अर्जुन ! ऐसे ईश्वर की शरण में तू जा, अपने पूरे भक्ति भाव से श्रद्धा से पूर्ण मनोयोग से उस ईश्वर को प्राप्त कर, **उसी की कृपा से तू सुख-शान्ति को प्राप्त करेगा।** यहाँ पर श्रीकृष्ण ने यह नहीं कहा कि **तू मेरी शरण में आ, वह ईश्वर मैं ही हूँ जो सबके हृदय में बैठा हूँ,** मैं ही सब को चला रहा हूँ, मैं ही तुझे सुख, शान्ति आदि प्रदान करूंगा इसलिये इससे पहले जहां भी ईश्वर परक वाक्य आये हैं वे ईश्वर की ओर से श्रीकृष्ण कह रहे हैं। यदि यह स्वीकार न किया जाय तो इन दोनों श्लोकों की संगति नहीं लग सकती है। गीता में **श्रीकृष्ण अर्जुन का संवाद एक भगवान्** और **भक्त का, गुरु-शिष्य** का, **वक्ता** और **श्रोता** का संवाद है। जिसके माध्यम से गीताकार ने गूढ़ विषयों को अधिक स्पष्ट किया है।

विद्या प्राप्ति के अधिकारीः-

विद्या प्राप्त करने का कौन अधिकारी है अर्थात् किसको शास्त्र का ज्ञान देना चाहिये अर्थात् शिष्य में क्या गुण होने चाहियें। इस विषय में शास्त्रों में उल्लेख मिलता है। यहाँ पर भी गीताकार ग्रन्थ की समाप्ति पर यह संकेत दे रहा है कि इस ग्रन्थ के द्वारा **जो ज्ञान** दिया है उसको **प्राप्त करने का अधिकारी कौन है?** इस विषय में लिखा है कि इस गुह्य उपदेश को किसी ऐसे व्यक्ति को कभी मत देना जो **तपस्वी नहीं** है, **भक्त नहीं** है, जिसमें **सेवाभाव नहीं** है या जो मेरी अर्थात् **गुरु की निन्दा करता है। विद्यार्थी में चार गुण** होने चाहिये। **गुरु की निन्दा न करे।** निन्दा से तात्पर्य है **गुणों में दोषों को ढूंढ़ना।** अर्थात् गुरु की प्रत्येक अच्छी बात शिष्य को बुरी लगे और गुरु के **सद्‌गुणों को दुर्गुण बतलावे,** इसे निन्दा कहते हैं। विद्यार्थी में दूसरा गुण **सेवाभाव** होना चाहिये। गुरु के प्रति **श्रद्धाभाव** हो और गुरु को अपनी सेवा के द्वारा सन्तुष्ट रखे। जिससे गुरु प्रसन्न होकर शास्त्र के गूढ़ रहस्यों को समझावे। विद्यार्थी में तीसरा गुण गुरु के प्रति उसकी आस्था-निष्ठा-भक्ति नहीं होगी तो गुरु की आज्ञापालन नहीं करेगा। जब गुरु शुभ कर्मों के लिये प्रेरित करेगा या अशुभ कर्मों को न करने के लिये आज्ञा देगा। तब श्रद्धा के अभाव में शिष्य आज्ञा के विपरीत आचरण करेगा। इसलिये ज्ञान को प्राप्त करने के लिये **शिष्य में श्रद्धा भक्ति होनी चाहिये।** शिष्य में चौथा गुण यह होना चाहिये कि शिष्य **तपस्वी होना** चाहिये। विद्या की प्राप्ति के लिये विद्यार्थी को बहुत ही परिश्रम करना पड़ता है। अनेक विघ्न और बाधाओं को सहन करना पड़ता है। इसके लिये उसको तपस्वी होना चाहिये। बिना तपस्या के विद्या नहीं प्राप्त होती है। किसी ने ठीक ही कहा है कि सुखार्थी को विद्या नहीं प्राप्त होती है और विद्यार्थी को सुख नहीं होता है। विद्यार्थी को तपस्वी होना चाहिये। इस प्रकार गीता स्पष्ट कर रही है कि यह गुह्य आध्यात्मिक ज्ञान, तपस्वी, भक्त, सेवाभावी और गुरु की निन्दा न करने वाले को देना चाहिये।

-(शेष अगले अंक में)

thearyasamaj.org

गतांक से आगे–

इस्लाम कैसे फैला

लेखकः– प्रीतम अमृतसरी

संक्षिप्त सूची उन मन्दिरों की जो औरंगजेब के हुकम से गिराये गये (सिंहासनारूढ़ होने से पूर्व)

सारांशपुर के निकट सीतादास जवाहिरी का बनाया हुआ एक चिन्तामणि का मन्दिर था। उसे औरंगजेब ने 1645 में गिराकर मस्जिद में तबदील किया। 'बम्बई गजेटीयर के लेखानुसार उसने **उक्त मन्दिर में गो–हत्या भी की** और फिर उस मस्जिद का नाम 'कुव्वतुल इस्लाम' रक्खा।

20–11–1665 का औरंगजेबी फरमान्

"अहमदाबाद तथा गुजरात के दूसरे परगनों में मैंने गद्दी नशीनी के पूर्व बहुत से मन्दिरों को गिरवाया। अब मुझे पता लगा है कि उनकी मरम्मत होकर वहां फिर से पूजा आरम्भ हो गई है। मेरे पहले हुकम की तअमील करो" (अर्थात् उन्हें फिर से गिरा दो और पूजा बन्द करवा दो)।

औरंगाबाद के नजदीक एक गांव सतारा आबाद है। वहाँ मैं शिकार के लिये जाया करता था। यहाँ पर्वत के शिखर पर खांडेराव की मूर्त्ति वाला एक विशाल मन्दिर था। ईश्वर की कृपा से मैंने उसे मिसमार करवाया और वहाँ पर नृत्य करने वालों को इस लज्जास्पद घृणित कार्य से रोक दिया। (देखो औरंगजेब का पत्र बेदार बख्त के नाम)।

फरमान बनारस अब्दुलहसन के नाम 28–2–1656 द्वारा शाहजादा मुहम्मद सुल्ताना

शरीअति मुहम्मदी के अनुसार यह निश्चय हुआ है कि पुराने मन्दिर न गिराये जायं, परन्तु नये भी न बनाने दिये जायं।

औरंगजेब की चिट्ठी

मेरे अहदि हुकूमत के आरम्भिक काल में सोमनाथ का मन्दिर गिरा दिया गया था, और वहाँ पर पूजा आदि भी बन्द कर दी गई थी। मुझे अब यह पता नहीं कि वहाँ क्या हाल है। यदि मूर्त्तिपूजकों ने फिर से वही कार्य आरम्भ कर दिया हो, तो मन्दिर का ऐसा नाश विनाश करो कि अमारत का नाम व निशान भी नजर न आये पुजारियों को भी वहाँ से निकाल बाहर करो।

thearyasamaj.org

(देखो स्ट्रअर्ट साहिब का 'बंगाल')

19-12-1661 को मीर जुमला कूच बिहार में प्रविष्ट हुआ। यहाँ का राजा तथा प्रजा नगर को खाली कर गये। उसने सैयद मुहम्मद सादिक को न्यायाधीश नियत करते उसे आदेश किया कि तमाम हिन्दू मन्दिरों को गिरा कर उनके स्थान पर मस्जिदें बनवा दो। उक्त जनरल (मीर जुमला) ने अपने हाथ में कुटार पकड़ कर **नारायण की मूर्त्ति को तोड़ा।**

मई 1669 में सालिह बहादुर को मलारनाना का मन्दिर (मिसनार) करने को भेजा गया।

2-9-1669 को दरबार में यह खबर आई कि आपकी (औरंगजेब) आज्ञानुसार आपके प्रति-निधि अफसरों ने काशी में श्री विश्वनाथ के मन्दिर को गिरा दिया है।

जनवरी 1670 रमजान में औरंगजेब ने (हुकम) दिया कि केशोराव का विशाल मन्दिर जो कि मथुरा में था जमीन के साथ मिला दिया जाये। उसके अफसरों ने शीघ्र ही इस आज्ञा का पालन किया। उसी स्थान पर बहुत सा धन व्यय करके एक मस्जिद बनवाई गई। वीर सिंह बुन्देला ने 3300000 रुपया लगाकर बनवाया था। छोटी और बड़ी मूत्तियाँ, जिनमें हीरे और जवाहरात लगे हुए थे, उखाड़कर आगरे लाई गई; और वहाँ जहान्आरा की मस्जिद की सीढ़ियों में इस उद्देश्य से लगाई गई कि आते जाते लोग उन पर पाँव रख कर उनका अपमान करें।

7-4-1760 को मालवा से सूचना प्राप्त हुई कि वजीरखान ने एक गलाम गदा बेग नामी को 400 सैनिक देकर इस उद्देश्य से भेजा है कि वह उज्जैन के इर्द गिर्द के तमाम हिन्दू मन्दिरों को (मिसनार) करदे।

मुरक्कआति अब्बुल हसन से:-

फरमान बनाम फौजदारी थाना, मुत्सद्दियानु एजणटान् जागीरदारान्, करोड़ियान्, व दीगर अमला अज कटकता मेदनापुर बर सरि सर्हद्दि उड़ीसा-

हमें विदित हुआ है कि उड़ीसा प्रान्त के तिलछटी ग्राम में काफिरों ने एक मन्दिर बनाया है। अतः इस फरमान से सूचना दी जाती है कि जहाँ कहीं भी 10-12 वर्ष के अन्दर कोई नया मन्दिर बना हो, चाहे वह कच्चा हो या पक्का, फौरन **मिसमार** करदो। **अन्यथा किसी काफिर हिन्दू को पुराने मन्दिरों की मरम्मत करने की आज्ञा न दो।** तथा मन्दिरों की तबाही के समस्त समाचार 'काजियों और पाक शेखों' के प्रमाण पत्र प्राप्त करके बहुत जल्द दरबार में भेजते रहना।'

(देखो जे.एम.राय की तवारीख ढाका बजवान बंगाली)

हरेक परगना में थानों से ऐसे अफसर आ गये हैं जिनके पास मन्दिरों को **मिसमार** करने की आज्ञा विद्यमान है।

दुराब खान को एक सेना देकर इसलिये खन्देला में भेजा गया कि वह वहाँ के राजपूतों का दमन करे और उनके विशाल मन्दिर को मिसमार करे। चुनांचि उसने 8-3-1679 को वहाँ आक्रमण किया और

thearyasamaj.org

खन्देला तथा सन्देला और उनके इर्द गिर्द के तमाम मन्दिरों को गिरा दिया।

25-5-1679 को खानजहान बहादुर, जोधपुर से, वहाँ के मन्दिरों को मिसमार करके और कई एक गाड़ियाँ (बुतों) मूर्त्तियों से लादकर वापस लौटा। औरंगजेब ने हुकम दिया, कि "इन तमाम मूर्त्तियों को जो कि सुवर्ण या रजत की बनी हुई थीं और जिनमें हीरे और जवाहरात लगे हुए थे, दरबार के आंगन में और जामिआ मस्जिद की सीढ़ियों पर रक्खा जाये, ताकि आते-जाते उन पर पांव रक्खें।

जनवरी 1680:-

महाराणा उदयपुर के महल के सामने वाला मन्दिर, जिस पर बहुत सा रुपया लगा हुआ था और जो कि उस समय की इमारतों में एक विलक्षण स्थिति रखता था, मिसमार करके उसकी मूर्त्तियों को तोड़ा गया।

24-1-1680:-

औरंगजेब, झील उदय सागर को देखने गया। उसने वहाँ जाकर हुकम दिया कि उसके तटस्थ तीन बड़े मन्दिरों को गिरा दिया जाये।

29-1-1680:-

हसन अलीखान् ने रिपोर्ट की, कि उदयपुर के गिर्दो नवाह में **172 अन्य मन्दिर गिराये गये हैं।**

22-2-1680:-

औरंगजेब चित्तौड़ में गया, और उसकी आज्ञानुसार **63 मन्दिर गिराये गये।**

10-8-1680:-

अब्बुतराब दरबार में वापिस आया। उसने सूचना दी कि मैंने अम्बर में 66 मन्दिर गिराये हैं।

2-8-1680:-

पश्चिमी मेवाड़ के सोमेश्वर मन्दिर को गिराने का हुकम दिया गया।

सितम्बर 1687:-

गोल्कण्डा को फतह करके औरंगजेब ने अब्दुर्रहीमखान को इस काम पर लगाया कि वह काफिरों की मजहबी रसूम को बन्द करे। और मन्दिरों को गिराकर उनके स्थान में मस्जिदें बनवाये।

1698:-

हमीदुद्दीन खान बहादुर, बीजापुर के मन्दिर को मिसमार करके, और उसके स्थान पर मस्जिद बनवा कर वापिस दरबार में आया। बादशाह ने स्वयं उसकी अत्यन्त श्लाघा की।

औरंगजेब का पत्र रूहुल्ला के नाम–

महाराष्ट्र के मकानात निहायत ही मजबूत और पायदार होते हैं क्योंकि वह पत्थर और लोहे से बनाये जाते हैं। मेरे आदमियों को चलते-चलते ऐसे हथियार नहीं मिलते कि जिनसे वह काफिरों के मन्दिरों को गिरा सकें। इसलिये एक ऐसा दरोगा नियत करो जो कि बअद में जाकर उन्हें गिराकर उनकी नीवों को भी खुदवा डाले।

thearyasamaj.org

1-1-1705:-

औरंगजेब ने मुहम्मद खलील और खिदमत राव दरोगा को बुलाकर हुकम दिया कि पण्ढरपुर के मन्दिर को मिसमार कर दो। **तत्पश्चात् वहाँ बूचड़ों को ले जाओ और गो-वध कराओ। चुनांचि ऐसा ही किया गया।**

तहजीबुल इस्लाम तृतीय भाग
(अब्दुल गफूर धर्मपाल)

महमूद जवानी के जोश में भरा हुआ है एक हाथ में तलवार दूसरे में ढाल लेकर वह अपने पहाड़ी किले से बाहर निकलता है। **चाहता है कि बांके राजपूतों को तलवार के जोर से इस्लामी कमन्द में फांसे।** वह अपने मकसद में बहुत कुछ कामयाब हो जाता है। **कितने ही बुजदिलों के हलक में बजोरि शमशेर इस्लामी कलमा उतार कर, बाकियों के सिर काट कर, बहुतों को लौण्डी गुलाम बना कर,** इस्लाम की फतह का डंका बजाता हुआ, अपने पहाड़ी किले में जा घुसता है। **कन्नौज, थानेसर, सोमनाथ के मन्दिरों को तोड़ फोड़, जर व जवाहरात को लूटकर वह फूला नहीं समाता।** उसके बुबुनयाद जोश की वजह से उसको अच्छे से अच्छे खिताबात् भी मिल जाते हैं, **मगर जिस मजहब की खातिर उसने लाखों घरों को उजाड़ा, वह मजहब उसको तसल्ली नहीं दे सकता।**

सफीरि कश्मीर बाबत 1897
सुल्तान सिकन्दर फर्मा-खाये कश्मीर

जब अमीर तैमूर ने भारतवर्ष पर आक्रमण किया तो उस वक्त सुल्तान सिकन्दर ने उसकी अताअत कबूल की और उसके दरबार में उपस्थित हुआ। तैमूर उस पर अतीव प्रसन्न हुआ। उसके पास सियाह बुत नामी एक नौ मुस्लिम था। सुल्तान ने उसे महामंत्री बना दिया। वह अमूरि दुनयवी में शाह का मुअतमिद बना। यह शख्स तालिअ अरजमन्द की बरकत से हनूद के आजार और ईजा रसानी में बहुत कोशिश करता था। जहाँ तक कि उसकी अताअत के वास्ते सुल्तान ने **हुकम दिया कि 'तमाम ब्राह्मण और हनूद के तमाम दानिशमन्द मुसलमान होवें और जो शख्स कि मुसलमान न होवे कश्मीर से निकल जावे। न कोई कशक या टीका लगावे न कोई सती की जावे। सोने और चांदी के तमाम बुतों को गला कर सरकारी सिक्के बनाये जाँय'** इस प्रकार हिन्दुओं को जिनमें अधिकांश ब्राह्मण थे, असह्य कष्ट हुआ। जो सज्जन न तो मुसलमान होना चाहते थे और न ही कश्मीर छोड़ सकते थे आत्मघात कर गये कई देश निर्वासित हो गये; **और बहुत से ब्राह्मण सुल्तान और उसके मंत्री के भय से भयभीत होकर मुसलमान हो गये।** सुल्तान ने समस्त बल मूर्त्तियों तथा मन्दिरों को तोड़ने में खर्च किया। उसने **राजा ललतावत का बनाया हुआ 1100 वर्ष पुराना मन्दिर** मिसमार किया; और इसी तरह कई और बुतखानों को तोड़ कर 'बुत शिकन' मशहूर हुआ।

खालद बिन अब्दुला काबुल के सिंहासन से उतारा गया वह भागकर सुलेमान पर्वत में आ छुपा। वहाँ उसने **अपनी पुत्री एक ऐसे अफगान को विवाह दी जो मुसलमान हो गया।** ❁❁❁

thearyasamaj.org

गतांक से आगे-

।। सृष्टि-प्रलय-संवत्सरादि काल गणना ।।

लेखकः - महात्मा ओम्मुनि, वैदिक भक्ति साधन आश्रम, आर्यनगर, रोहतक (हरियाणा)

1. एक चतुर्युगी-43,20,000 वर्ष (सतयुग-17,28,000 त्रेतायुग-12,96,000 द्वापरयुग-8,64,000 व कलियुग-4,32,0,00 वर्ष) और 71चतुर्युगियों का एक मन्वंतर।
2. एक मन्वंतर- 43,20,000 x 71 = 30,67,20,000 वर्ष का।

1.	मानव उत्पत्ति से पूर्व का सन्धिकाल	1,20,96,000 वर्ष
2.	6 मन्वंतरों का काल	1,84,03,20,000 वर्ष
3.	7वें मन्वंतर की 27 चतुर्युगियाँ	11,66,40,000 वर्ष
4.	28वीं चतुर्युगी के प्रथम तीन युग	38,88,000 वर्ष
5.	28वें कलियुग के गत वर्ष	5115 वर्ष
6.	कुल योग	1,97,29,49,115 वर्ष

इस प्रकार वर्तमान सृष्टिकाल के 1,97,29,49,115 वर्ष बीत चुके हैं और दिनांक 20-02-2014 से 1,97,29,49,116 वाँ वर्ष प्रारम्भ हो चुका है।

अब कलियुग की गणना का प्रमाण इस प्रकार से है-भारत के महान् गणितज्ञ एवं ज्योतिषाचार्य आर्यभट्ट के अनुसार जब उनकी आयु 23 वर्ष थी तब कलियुग को प्रारम्भ हुए 3600 वर्ष हो चुके थे। उस समय शंक संवत् का 421 वाँ और ईसवी संवत् का 499 वाँ वर्ष चल रहा था। (अब शक संवत्-1936-421 =1515, ईसवी संवत् 2014-499 =1515) कलियुग के 3600 वर्षों में उपरोक्त 1515 के अन्तर का योग करने पर 5115 वर्ष कलियुग के बनते हैं। इस साक्ष्य के अनुसार अब तक कलियुग को प्रारम्भ हुए 5115 वर्ष बीत चुके हैं और दिनांक 20-02-2014 से 5116 वाँ वर्ष प्रारम्भ हो चुका है। इस लेख में सृष्टि-प्रलय काल एवं चन्द्रमास, सौरमास, संवत्सर, सृष्टिसंवत् एवं मानव व वेदोत्पत्ति संवत् आदि के विषय में वैदिक प्रमाणिकता के आधार पर विवेचन और गणना का प्रयास किया गया है। अतः प्रत्येक वैदिकधर्मी का यह पावन कर्तव्य है कि वह पौराणिक भेड़चाल का अनुसरण न करते हुए वैदिक रीति के अनुसार ही मास, वर्ष और संवतों को मनाये व औरों को मनाने की प्रेरणा करें। इसी शुभ भावना और कामना के साथ। इत्योम् शम्।

❀❀❀

thearyasamaj.org

मूर्खवर्ग

–श्रीबुद्धगीता से साभार

आनंद ने एक दिन भगवान बुद्धदेव से हाथ जोड़कर निवेदन किया, ''पूज्य गुरुदेव, मूर्ख कौन है? कृपा कर आप मुझे अच्छी प्रकार समझाइये क्योंकि प्रायः लोग एक दूसरे को, जब कोई उनकी बात न माने, मूर्ख कहने लगते हैं। इस शब्द का ठीक प्रयोग किन अर्थों में किया जाता है?''

भगवान बुद्धदेव बोले–''हे आनन्द, जो जागता है उसे रात बड़ी लम्बी मालूम होती है; जो थका हुआ है उसके लिये एक मील चलना भी दूबर है; धर्म को न जानने वाले मूर्ख के लिये जीवन के दिन मुश्किल से कटते हैं।''

किसी मुसाफिर को रास्ते में अपना सा या अपने से बढ़कर विद्वान साथी न मिले तो उसे दृढ़ता से अकेले ही सफर करना चाहिये क्योंकि मूर्खों के साथ सहवास अनुचित है।

'यह मेरे लड़के हैं, यह मेरा धन है' मूर्ख इन्हीं विचारों से पीड़ित रहता है। उसका अपना शरीर भी हकीकत में अपना नहीं है। फिर भला संतान और धन कितने दर्जे तक उसके बन सकते हैं।

मूर्ख पुरुष जो अपनी मूर्खता को समझता है उस दर्जे तक बुद्धिमान है। लेकिन जो मूर्ख अपने आपको बुद्धिमान समझता है वह निश्चय ही मूर्ख है।

जिस प्रकार चमचा निरंतर दाल–तरकारी के साथ रहने पर भी उनका रसास्वादन नहीं कर सकता है, उसी प्रकार मूर्ख जीवन पर्यन्त ज्ञानी के साथ रहने पर भी धर्म को नहीं जान सकता है।

जैसे जबान दाल–तरकारी के स्पर्शमात्र से ही उनका स्वाद जान लेती है इसी प्रकार समझदार मनुष्य एक मिनट के लिये भी यदि विद्वान् की संगति करे तो वह अति शीघ्र सत्य का अनुभव कर लेगा।

अल्पबुद्धि के मूर्ख लोग खुद अपने बड़े कट्टर शत्रु हैं, क्योंकि वे कड़वे फल उत्पन्न करनेवाले कर्मों को करते हैं।

वह धर्म सचमुच श्रेष्ठ नहीं कहलाता जिसके करने के पश्चात् हाथ मलने पड़ें और जिसके फल के मिलते समय आँसू बहाने पड़ें।

इसके विपरीत वह काम श्रेष्ठ है जिसके करने के बाद मनुष्य को कोई पश्चात्ताप नहीं करना पड़ता और जिसका फल वह खुशी से हँसते हुये लेता है।

जब तक बुरा कर्म बुरे परिणाम पैदा नहीं करता तब तक मूर्ख को वह मधु की तरह मीठा मालूम होता है; लेकिन जब बुरा काम बुरे फल देने पर आता है तब मूर्ख पुरुष सिर धुन–धुनकर पछताता है।

किसी त्यागी की तरह यदि कोई मूर्ख महीनों कुशा के तिनके से भोजन करे, तो भी वह धर्म–पथ पर चलने वाले पुरुष की सोलहवाँ हिस्सा भी बराबरी नहीं कर सकता।

thearyasamaj.org

ताजा ढका हुआ दूध जैसे जल्दी नहीं बिगड़ता उसी प्रकार बुरे कर्मों का फल भी जल्दी मालूम नहीं होता, किन्तु वह राख दे दबी हुई अग्नि की तरह है और वह उस मूर्ख का पीछा नहीं छोड़ता।

और बुरे कर्मों का भेद खुलने के बाद मूर्ख को केवल रंज ही नहीं पहुंचता बल्कि उसकी खुशनसीबी को भी मिट्टी में मिला देता है; यहाँ तक कि दुःख के मारे उसका सिर फटने लगता है।

मूर्ख मनुष्य खोटी कीर्त्ति की चाह रखता है; उसे भिक्षुओं में नेता बनने की धुन होती है, वह मठों की महन्तगिरी के पीछे लगा फिरता है और दूसरे लोगों से पुजवाने की अभिलाषा में संलग्न रहता है।

'गृहस्थ और गृहत्यागी समझें कि यह काम मैंने किया है; जो काम करना है या नहीं करना है उसके लिये वे मेरे फैसले के अनुसार चलें' इस प्रकार विचार करने से मूर्ख पुरुष के अहंकार और तृष्णा की वृद्धि होती है।

एक मार्ग धन की तरफ ले जाने वाला है और दूसरा पथ निर्वाण की ओर ले जाने वाला है, यदि बुद्ध के भिक्षु ने इस बात को भली प्रकार समझ लिया है तो वह प्रतिष्ठा की लालसा नहीं करेगा बल्कि वह संसार से मुक्त होने का प्रयत्न करेगा। ❁❁❁

पृष्ठ सं. 10 का शेष–

विजयी राजा द्वारा अपने ही देश में कराकर उसे छोड़ देने का, या उसे उसी के अपने देश में भेज देने का विधान था। युद्ध में पकड़ी गई कन्या से एक वर्ष तक विवाह की बात ही न की जा सकती थी। लूट के माल का विनियोग भी एक वर्ष के बाद होता था।

दो लड़ रही सेनाओं में अस्थिर शान्ति कराने का प्रकार यह था कि एक ब्राह्मण उन युद्ध–व्यस्त दलों के बीच में आ जाता। उसे देखते ही योद्धा लोग रुक जाते।

इन उदात्त नियमों पर किसी टीका–टिप्पणी की आवश्यकता नहीं। किसी भी युग में किसी भी जगह इन नियमों का आदर ही किया जाएगा। ❁❁❁

पृष्ठ सं. 9 का शेष –

जल में बसै कमोदिनी चन्दा बसै अकास।
जो है जाको भावता सो ताही के पास॥ 12॥
प्रीतम को पतियाँ लिखूँ, जो कहुँ होय विदेश।
तन में मन में नैन में, ताको कौन सँदेस॥ 13॥
उतते कोई न बाहुरा, जाते बूझूँ धाय।
इतते सब ही जात हैं, भार लदाय लदाय॥ 14॥
जो आवै तो जाय नहिं, जाय तो आवै नहिं।
अकथ कहानी प्रेम की, समझ लेहु मन माहिं॥ 15॥

❁❁❁

thearyasamaj.org

ईश्वर ने दुनियां क्यों बनाई?

लेखकः पं० रामचन्द्र देहलवी

आज का मजूमन (विषय) है कि परमात्मा ने दुनियां क्यों पैदा की? कई बार यह सवाल मेरे सामने आया है और हत्तुलबसा (यथाशक्ति) प्रयत्न किया है कि मैं उनको उस सम्बन्ध में तसल्लीबख्श उत्तर दूँ। आज भी हमारे एक मेहरबान ने कहा कि-

"दिल में मेरे, यह ख्याल उत्पन्न होता है कि जब वह अपने आप में कोई कमी नहीं रखता। पूर्ण है !! (पर्फेक्ट) है!!! तो दुनियां क्यों बनाई"? मैंने कहा-"यही दलील बनाने की जरूरत को साबित करती है यानि उसका हर तरह पूर्ण होना।"

आप कहेंगे-"कैसे"? जिसके अन्दर कोई ख्वाहिश नहीं, कोई इच्छा नहीं, कोई कमी नहीं लेकिन पूर्णता है हर प्रकार की। इल्म भी उसका पूरा है, शक्ति भी उसमें पूरी है और व्यापकता भी उसकी पूरी है, तीनों प्रकार से जो पूरा है यानि परमात्मा! तो बतलाइये वह अपनी इस पूर्णता को किस प्रकार सफल करे? अपने इस कमाल को किस प्रकार से बाकार करे?

क्योंकि किसी शय का होना महज होने के लिये हो तो उसका होना न होने के बराबर होता है। जरा गौर कीजिये मेरे अल्फाज (शब्दों) पर। किसी वस्तु का होना महज होने के लिये हो तो उसका होना न होने के बराबर होता है। परमात्मा पूर्ण है। अपनी पूर्णता का क्या लाभ? अपने पूरे आलिम (काबिल) होने का क्या लाभ? सूरज से प्रकाश हमको मिलता है, इस बल्ब से भी प्रकाश हमें मिलता है। हम पूछते हैं कि इसका इसके अलावा-कोई और लाभ है कि आपको रोशनी दे रहा है?

पूर्णता का होना इसी चीज में पूरा होगा कि जितना ज्यादा फायदा उसकी पूर्णता यानि कमाल से दूसरे को हो जाये उतना ही उसका वजूद सफल है और जितना न पहुँचे उतना ही असफल है।

आप कल्पना कीजिये कि-एक वजूद है और उसके अलावा और कोई नहीं है और वही है तो मैं कहूंगा "उसका होना न होने के बराबर है।" मिसाल के तौर पर अगर एक बड़ा हकीम है। लेकिन बीमार कोई नहीं है और न दुनियां में दवाईयां हैं तो मुझे बताइये कि हकीम के होने का क्या फायदा है?

जब कोई मरीज नहीं और कोई दवा नहीं है तो किसके लिये दवा दे और क्यों दे? वह हकीम फायदेमंद है। जो मास्टर है (पढ़ाने वाला) उसके पास अगर पढ़ने वाले लड़के नहीं हैं तो मास्टर का जीवन बेकार है, बाकार नहीं है।

इसलिये विद्वान लोगों ने कहा है कि जो अपने अन्दर कोई गुण रखता है उस गुण की सफलता अन्य को लाभ पहुँचाने में है। अपनी गरज तो हम पूरी करते ही हैं लेकिन अपने कमाल से गैरों की गरज

thearyasamaj.org

को पूरा करना और उनके लिये सहारा बनना यह ऊँचे दर्जे की चीज है।

एक अंग्रेजी का बहुत छोटा सा जुमला है (एव्री आपार्चुनिटी टु हेल्प इज ए ड्यूटी)। प्रत्येक अवसर जो हमें सहायता का मिल जाय वह हमारा कर्तव्य है, जो मौका भी हमें मिल जाये किसी की मद्द करने का वह हमारा फर्ज है क्योंकि हम अपने गुण से कुछ तो फायदा पहुँचाएं, अपने कमाल से उसको लाभान्वित करें।

तो वह क्या करेगा? जहाँ वह अपना होना सफल करेगा वहाँ उसका जीवन मार्ग भी सफल हो जायेगा जिसकी वह मदद करेगा। माता और पिता उसका नमूना हैं। मैं यह पूछता हूँ कि इतने स्कूल और कालिज खुले हैं क्या किसी लड़के ने कोई दरख्वास्त दी कि–"अब हम तैयार हो गये हैं या होते जा रहे हैं। मेहरबानी करके अब हमारे लिए स्कूल और कालिज खोलिये। नहीं न!" तो कौन सोच रहे हैं? बुद्धिमान सोच रहे हैं, अक्लमंद सोच रहे हैं या दूसरे लफजों में यह कहिये कि जिन्होंने इल्म का मजा हासिल किया है उन्होंने अपना कर्तव्य समझा है। क्या? "कि वह जो हमारे आधीन हैं, और विद्या से विहीन है, उनको हम उसी आनन्द का मजा चखाएं कि जिस आनन्द का मजा हम विद्या और इल्म हासिल करने के बाद ले रहे हैं।"

वे उससे खाली न रहें जो हमारे मातहत हैं। इसलिये माँ बाप अपने बच्चों को बगैर दरख्वास्त के, स्कूल कायम करने के लिये प्रयत्न कर रहे हैं कि खुलने चाहियें, यहाँ खुलने चाहिएं। क्यों क्या जरूरत है? अरे वह विद्वान् हो ही चुके हैं, उम्र उनकी खत्म होने को है। क्या पता दुनियां से थोड़े ही दिनों में चले जायें? तो भी वह कोशिश क्यों कर रहे हैं कि बच्चों के लिये स्कूल खुलना चाहिये?

सिर्फ इसलिये कि जिस प्रकार इन्होंने विद्या प्राप्त करके आनन्द उठाया है ठीक उसी प्रकार इनकी सन्तान भी विद्या प्राप्त करके आनन्द भोग करें।

परमात्मा सर्वज्ञ है। बहुत से लोग इन लब्जों में कहा करते हैं कि–"परमात्मा ने अपने सर पर यह सरदर्दी क्यों मोल ली है कि दुनियां बना रहा है? बैठा रहता मौज में। कुछ करने की जरूरत नहीं थी, कोई चाह नहीं थी, कुछ नहीं थी" मैं कहता हूँ "सबसे बड़ी चाह यह है कि मेरा अपना होना सफल हो जाए, बाकार हो जाए, बेकार न रहे। बेकार होने से मैं निकम्मा हो जाता हूँ।"

मेरा बोलना तब सफल होता है जब सुनने वाले हों। क्यों कहा करते हैं मंत्री जी "अभी और आने दीजिये आदमियों को।" यहां आदत पड़ी हुई है दस बजे से आरम्भ करने की। लोग फारिग होकर आते हैं–तो क्या मतलब? मेरे बोलने को सफल करने के लिये वे चाहते हैं कि श्रोतागण अधिक से अधिक संख्या में आ जाने चाहियें। उसके बगैर वह सफल नहीं होता है। इसी तरह परमात्मा का वजूद कहाँ सफल होगा? वह आलिम है। वह आलिमेकुल है।

इल्म हमेशा जाहिलों में सफल होता है। ताकत हमेशा कमजोरों की रक्षा में सफल होती है, याद रखियें। औ.र रोशनी हमेशा अंधेरे में सफल होती है, जहाँ अंधेरा है वहीं उसको ले जाइये वहां रोशनी

thearyasamaj.org

सफल हो जायेगी। आलिम अपनी जिन्दगी को वहां सफल कर सकते हैं कि जहां जाहिल हैं ताकि उनको इल्म मिल जाये। इल्म के मिलने से वे सफल हो जायेंगे।

तो समझ लेना चाहिये कि भगवान् आलिमेकुल है लिहाजा अपने इल्म की बिना पर ही उसकी जिम्मेदारी हो गई है उसकी (रिसपॉन्सिबिलिटी) का आगाज अपने आलिमेकुल होने से ही शुरू हो गया है।

एक पुरानी मसाल चली आती है कि-**जो समझे वही तेल को जाये, मतलब-तेल लेने को जाये।** चिराग जलाना है, समझ गया है? अंधेरा है!! जो जान गया है कि अंधेरा है तो उसी को जाना चाहिये तेल लेने के लिये।

इसका अर्थ यह है कि उसी का फर्ज है कि जरूरत को पूरी करे। इसलिये जब परमात्मा जानता है कि जीवात्मा इल्म में कमजोर है, महदूदुल्अक्ल है, अल्पज्ञ है, कम जानने वाला है और मैं ज्यादा जानने वाला हूँ तो इससे बेहतर और कौन सा मौका होगा परमात्मा के लिये, कि वह अपने अस्तित्व को सफल करे, अपने इल्म को बाकार करे, बेकार न रहने दे, (यूजफुल) बनाये (अनयूजफुल) न रहने दे, यों कहिये।

सोचने की बात है इस बिना पर भगवान् ने क्या किया? कि हमेशा से जीवात्मा उसके साथ है अनादि काल से। तो अनादि काल से उसने क्या समझा? कि मेरी ड्यूटी है अब मेरा यह कर्तव्य है-एव्री ओपोर्च्युनिटी टू हेल्प इज ए ड्यूटी और ये (ओपोर्च्युनिटी) और यह मौका परमात्मा को अनादि काल से मिला हुआ है। वह अनादि काल (देयर इज नो बिगनिंग एट ऑल) जहां कोई शुरू नहीं है-तब से मिला हुआ है।

ऐसा मौका भगवान् को मिला हुआ है और जीवात्मा उसके पास है लिहाजा ईश्वर अपने अस्तित्व को सफल समझता है। क्योंकि जीवात्मा को ज्ञान प्रदान करता है, शक्ति प्रदान करता है।

मैंने आपके सामने मंत्र पढ़ा था-'**य अत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते**', जिस भगवान् ने हमें आत्म ज्ञान, अर्थात् अपने आप का ज्ञान दिया है। हम अपने आपको भी नहीं जानते थे।

करोड़ों आदमी अभी भी ऐसे हैं जो यह कहते हैं कि हम तो कम्पाउण्ड ऑफ एलीमेंटस हैं।

आग, पानी, हवा, ज़मीन बगैरा के मेल से हमारे अन्दर यह शऊर पैदा हो गया है, अथवा यह ज्ञान पैदा हो गया है। वे कहते हैं कि बस '**यावज्जीवेत् सुखं जीवेत्**' जब तक जीवे सुख से जीवे।, '**ऋणं कृत्वा घृतं पिवेत्**', कर्ज करके घी पीवे, '**भस्मिभूतस्य देहस्य पुनरागमनम् कुतः**', यह शरीर जल जायेगा, इस शरीर का पुनः आना किसने देखा है? यह तो खत्म हो जायेगा। बतलाइये ऐसे आदमी हैं जो उनके लिये क्या है? उनके लिये तो कुछ नहीं है। लेकिन जो कहते हैं कि हकीकत में हम हमेशा रहने वाले हैं वे जानते हैं कि हमें दुबारा आना है। यह शरीर जो है वही तो नाशवान् है। बाकी जीवात्मा तो नित्य है। तो जिन्होंने जीवात्मा को नित्य नहीं समझा केवल यह समझा कि हम कम्पाउण्ड ऑफ एलीमेंटस हैं, इन भूतों का संघात हैं उनके लिये पाप पुण्य की कोई कीमत नहीं।

सांख्य दर्शन रचयिता कपिल मुनि ने कहा है कि '**न भूत चैतन्यं-प्रत्येक दृष्टेः सांहत्येपि च**

thearyasamaj.org

सांहत्येहि च। न भूत चैतन्यं'–आग, पानी हवा, जमीन आदि इनमें चेतना नहीं है। वह यह कहते हैं कि इनके अन्दर शऊर नहीं है। इसलिये इनके मेल से ज्ञान कैसे उत्पन्न हो जायेगा? कभी नहीं हो सकता।

मैं अब पूछ लूं जरा, बच्चे भी समझ जायेंगे और मास्टर साहेबान भी समझ जायेंगे कि अगर किसी स्कूल के लिये बी0ए0बी0टी मास्टर की जरूरत हो तो क्या दस पास को भेज देने से कमी पूरी हो जायेगी? वह कहते हैं "तन्ख्वाह तो ज्यादा देनी पड़ेगी, कुर्सियां ज्यादा मंगवानी पड़ेंगीं बैठने के लिये, जगह कम हो जायेगी लड़कों के लिये बैठने की, जो दस आ जायेंगे। लेकिन पढ़ाई में कुछ न होगा, योग उसका वही होगा दस पास। चाहे हजार मास्टर हों दस पास, सौ हों तो दस हों। योग में योग्यता वही आएगी जो एक की है।"

तो हमें समझ लेना चाहिये कि किस प्रकार से हो सकता है कि भूत जिनमें ज्ञान नहीं है, जिनमें शऊर नहीं है उनके मिलाने से शऊर पैदा हो जायेगा यानि ज्ञान की उत्पत्ति हो जायेगी? कैसे हो सकती है जब किसी में ज्ञान है ही नहीं?

यों जरा अच्छा समझ आ जायेगा कि फर्ज कीजिये दस–दस रुपये दसवीं क्लास पास दस व्यक्तियों को दे दिये। तो दस धाए सौ। रूपये का योग हो गया सौ, लेकिन योग्यता का योग रहा दसवीं क्लास पास। इससे ज्यादा नहीं हुआ। तो मालूम हुआ कि यह ख्याल कि हम भूतों के संघात हैं और भूतों के संघात से हमारे अन्दर शऊर आ गया है वह बुद्धि के विरूद्ध बात है।

इसलिये भगवान् ने क्या कहा? "तुम नहीं जानते थे, मैंने तुम्हें पैदा करके, अपना ज्ञान तुम्हें दिया है।" तो **'य आत्मदा'**, आत्मा के माने क्या है? आत्मा का अर्थ है सेल्फ और आत्मा के माने हैं कि जो दूसरे में व्यापक हो सके, अपने आपे को गैर में बढ़ा सके, दूसरे को अपना जैसा समझे अर्थात् यह समझे कि गैर की तकलीफ मेरी तकलीफ है, गैर का सुख मेरा सुख है। ऐसा अपने को समझा सके, बता सके। इसे आत्मा कहते हैं।

'अततिव्याप्नोतीति आत्मा' जो व्यापक हो सके। माताएं है, अपनी जितनी सन्तान होगी उसी में व्यापक हो जायेंगी। दस सन्तान हैं तो दस में उतना ही प्रेम होगा, पाँच हैं तो पाँच में उतना ही प्रेम होगा। वह नहीं चाहती है कि उनमें से कोई कम हो जाये। ज्यादा हो जायें तो कोई हर्ज नहीं।

मैंने एक देवी से पूछ लिया कि जो अपनी सन्तान से बहुत परेशान हो रही थी, "क्या आप चाहती हैं कि कोई बच्चा इनमें से कम हो जाये?" हँस के वह स्त्री कहती है "पण्डित जी यह ख्याल कभी नहीं आता कि कम हो जाये।" मैंने कहा, "कोई एक बढ़ जाये तो! वह बोली–तो भगवान् की मेहरबानी"। बढ़ने के लिये कह देती है लेकिन सन्तानों में कमी नहीं चाहती। क्यों नहीं चाहतीं? क्योंकि अपने आप को उन्होंने बढ़ा करके बच्चे के अन्दर डाल दिया है।

तो कहते हैं आत्मा का अर्थ **'अतति व्याप्नोतीति आत्मा'** कि जो अपने आपको बढ़ा सके एक बात, और दूसरे अपने आप सेल्फ को जाने कि "मैं क्या हूँ"? लोगों ने जाना नहीं कि जीवात्मा परमात्मा के पास हमेशा से है और हमेशा ही होने की वजह से परमात्मा जानता है कि ये मेरे पुत्रवत हैं और मैं इनका पितावत् हूँ और मैं मौजूद हूँ।

–(शेष अगले अंक में)

thearyasamaj.org

गतांक से आगे–

अप्रिय अवस्थाओं से निकलने का मार्ग

लेखकः दयाचन्द्र गोयलीय

परन्तु अमीर और गरीब सभी को अप्रिय अवस्थाओं में से निकलना पड़ता है। अमीरों को बल्कि गरीबों की अपेक्षा अधिक कष्ट उठाना पड़ता है। इससे प्रगट है कि सुख सांसारिक वस्तुओं पर निर्भर नहीं है। सुख का आधार अंतरंग जीवन है। मान लो कि तुम मालिक हो और तुम्हें अच्छे नौकरों के न मिलने के कारण बड़ी तकलीफ उठानी पड़ती है। यदि कभी अच्छे ईमानदार नौकर मिल भी जाते हैं तो वे जल्दी नौकरी छोड़कर चले जाते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि धीरे-धीरे तुम्हारा विश्वास लोगों पर से हटता जाता है या बिलकुल जाता रहता है। अब तुम नौकरों को मजूरी भी अधिक देते हो और उन्हें छुट्टी और आजादी भी पहले से ज्यादा देते हो, तो भी नौकरों का वही हाल है। ऐसी दशा में, मैं तुम्हें यह सलाह दूँगा कि तुम्हारी कठिनाइयों का कारण तुम्हारे नौकरों में नहीं है, किन्तु स्वयं तुम में है। यदि तुम अपने हृदय के भीतर प्रवेश करके देखो, और शुद्ध अंतःकरण से अपने दोषों को ढूँढ़ने और उनके दूर करने का प्रयत्न करो तो तुम्हें देर सवेर कभी न कभी अपने दुःख और कष्ट का कारण ज्ञात हो जाएगा। सम्भव है कि तुम में कोई ऐसी स्वार्थयुक्त इच्छा हो, अथवा तुम्हारे मन में ऐसा अविश्वास वा अप्रिय भाव हो कि जो न केवल दूसरों पर किन्तु स्वयं तुम पर अपना विषैला प्रभाव डालता हो, चाहे तुम अपने भावों और शब्दों से उसको प्रगट न भी करो। अपने नौकरों के साथ सदैव दया का व्यवहार करो, उनके सुख दुःख का निरंतर ध्यान रक्खो, कभी उनसे हद से ज्यादा काम न लो और यह सोचो कि यदि तुम उनकी दशा में होते तो तुम भी इतना काम करना पसंद न करते। इसमें संदेह नहीं कि नौकर में ऐसी नम्रता का होना कि वह अपने मालिक की भलाई करने में अपने आपको बिलकुल भुला दे, बहुत ही उत्तम और सुन्दर है, परन्तु इससे भी अधिक उत्तम और सुन्दर वह नम्रता और उदारता है कि जिससे मालिक अपने सुख को भूल कर अपने आधीनस्थ सेवकों और आश्रितों के सुख का ध्यान रक्खे। ऐसे आदमी की खुशी दसगुणी बढ़ जाती है और फिर उसे अपने नौकरों की शिकायत करने की जरूरत नहीं रहती। एक प्रसिद्ध मनुष्य का जिसके यहाँ बहुत से नौकर थे और जिसे कभी एक नौकर के भी हटाने की जरूरत नहीं हुई, कथन है कि "मेरे नौकर सदैव मुझ से प्रसन्न रहते हैं। यदि तुम इसका कारण पूछो तो मैं यही कह सकता हूँ कि मेरी शुरू से ही यह इच्छा रही है कि मैं उनके साथ वैसा ही व्यवहार करूँ जैसा कि मैं चाहता हूँ कि और लोग मुझसे व्यवहार करें।" बस यही सफलता का रहस्य है। ऐसा करने से ही मनुष्य सर्व प्रकार से सुख लाभ कर सकता है और अप्रिय अवस्थाओं से निकल सकता है। यदि तुम यह कहते हो कि हम अकेले हैं, हमसे कोई प्रेम का व्यवहार नहीं करता और इस संसार में हमारा कोई भी मित्र व सहायक नहीं है, तो

thearyasamaj.org

मैं यहाँ तुम से तुम्हारे ही हित के लिए यह प्रार्थना करता हूँ कि इस विषय में तुम अपने सिवाय और किसी को दोष मत दो। इसमें सर्वथा तुम्हारा ही दोष है। दूसरों के साथ मित्रता का व्यवहार करो, फिर देखो सैकड़ों आदमी तुम्हारे इर्द-गिर्द आकर जमा हो जाएँगे। अपने आपको शुद्ध, सदाचारी और प्रेमपात्र बनाओ, फिर सब तुम से प्रेम और स्नेह करने लगेंगे। फारसी के प्रसिद्ध विद्वान् शैखसादी ने कहा है कि जहाँ कहीं पानी का मीठा चश्मा होता है, वहाँ सब पशु पक्षी और मनुष्य अपने आप जमा हो जाते हैं।

जो-जो बातें तुम्हारे जीवन को दुःखदाई बना रही हैं, तुम उन सबको दूर कर सकते हो, यदि तुम अपने हृदय को शुद्ध कर लो और अपने मन को अपने वश में कर लो। चाहे तुम्हें निर्धनता सताए (स्मरण रहे यहाँ पर निर्धनता से तात्पर्य उस निर्धनता से है जो दुःख और विपत्ति का कारण है न कि उस निर्धनता से जो मुक्त जीवों के लिए गौरव की वस्तु है), चाहे धन सम्पदा तुम्हारे लिए जंजाल हो और चाहे दुःख, कष्ट और शोक तुम्हें अप्रिय मालूम होते हों, तुम उन सब को दूर कर सकते हो यदि तुम अपने भीतर से स्वार्थ को निकाल दो। स्वार्थ के कारण ही वे सब दुःख का कारण हो रहे हैं।

कर्म का सिद्धान्त अटल है। जैसा हमने पूर्व जन्म में किया, अथवा इसी जन्म में किया, उसका फल हम भोग रहे हैं। जैसा हम अब करेंगे, उसका फल आगे भोगेंगे। हम प्रतिक्षण पिछले कर्मों को उदय में लाते और आगे के लिए नवीन कर्मों का बंध करते हैं। मान लो कि किसी मनुष्य का धन चोरी चला गया अथवा किसी का पुत्र मर गया, अथवा कोई अपने पद से गिर गया, तो समझना चाहिए कि उसने पूर्व में कुछ ऐसे बुरे कर्म किये होंगे कि जिनका यह बुरा फल उसे मिला। परन्तु इससे उसे निराश या हतोत्साह नहीं होना चाहिये, कारण कि उसमें नवीन कर्मों के करने की शक्ति है। उसे समझना चाहिये कि मैंने पहले कोई बुरा कर्म किया होगा, उसका यह फल मुझे मिला। मैं इस फल को उदासीनता से भोग लूँ और आगामी के लिए शुभ कर्मों का बंध करूँ कि जिससे आगामी में उनका अच्छा फल मुझे मिले। यदि इस समय मैं इन दुःखों को भोगते हुए अपने मन में दुःखी हूँगा तो यह मेरे लिए हानि का कारण होगा, कारण कि इस समय दुःख मनाने से अथवा उपाय करके दूसरे को दोष देने से मैं अपने लिए फिर अशुभ कर्मों का बंध बाँधूगा और उसका बुरा फल फिर मुझे आगामी में भोगना पड़ेगा। जो मनुष्य दुःखों को उदासीनता के साथ सहन कर लेता है और अच्छे कर्मों के लिए उद्योग करता है और सच्चाई और ईमानदारी पर जमा रहता है, वह सदा सुखी और प्रसन्न रहता है।

जो मनुष्य स्वार्थ में लिप्त रहता है, वह स्वयं अपना शत्रु है और उसके चहुँ ओर शत्रु घिरे रहते हैं, परन्तु जो मनुष्य स्वार्थ को त्याग देता है, वह स्वयं अपना रक्षक है और उसकी रक्षा के लिए चहुँ ओर मित्र घिरे रहते हैं। विशुद्ध हृदय मनुष्य के ईश्वरी प्रकाश के सामने सम्पूर्ण अंधकार नष्ट हो जाता है और मेघ पलायमान हो जाते हैं, अर्थात् जब मनुष्य का हृदय पवित्र हो जाता है तो उसमें से सम्पूर्ण विकार और कुत्सित भाव निकल जाते हैं। जिस मनुष्य ने अपने को वश में कर लिया है उसने मानो सम्पूर्ण संसार को विजय कर लिया है। अतएव तुम भी अपनी इन्द्रियों को अपने वश में कर लो, तुम्हारी निर्धनता जाती

thearyasamaj.org

रहेगी, और तुम्हारे सम्पूर्ण दु:ख दूर हो जाएँगे, फिर तुम्हें कोई शिकायत नहीं रहेगी। बस, अधिक देर मत करो, स्वार्थपरता के फटे पुराने चीथड़ों को अपने शरीर पर से उतार डालो और उनके स्थान में सार्व प्रेम के सुन्दर वस्त्र को धारण करो। उस समय तुमको अपने भीतर स्वर्ग दिखलाई देगा और उसका प्रतिबिम्ब तुम्हारे बाह्य जीवन पर पड़ेगा।

जो मनुष्य दृढ़ता के साथ आत्मत्याग और इन्द्रियनिग्रह के मार्ग पर कदम रखता है और विश्वास रूपी यष्टिका (लाठी) के सहारे चलता है उसे निश्चय से विजय और सफलता होगी और स्थाई और अपिरिमित सुख की प्राप्ति होगी। ❁❁❁

महापुरुषों की जयन्ती

स्वामी श्रद्धानन्द	2 फरवरी
सन्त रविदास	3 फरवरी
सीताष्टमी (जानकी जन्म)	12 फरवरी
सरोजनी नायडू	13 फरवरी
स्वामी रामदास	13 फरवरी
महर्षि दयानन्द सरस्वती	14 फरवरी
रामकृष्ण परमहंस	20 फरवरी
याज्ञवल्क्य	23 फरवरी

17 फरवरी

मूलशंकर (महर्षि दयानन्द सरस्वती) बोधरात्रि

महापुरुषों की पुण्यतिथि

कल्पना चावला	1 फरवरी
कन्हैयालाल मुंशी	8 फरवरी
पं0 दीनदयाल उपाध्याय	11 फरवरी
सुभद्राकुमारी चौहान	15 फरवरी
रानी चेन्नम्मा	15 फरवरी
वासुदेव बलवंत फड़के	17 फरवरी
गोपाल कृष्ण गोखले	19 फरवरी
कस्तूरबा गांधी	22 फरवरी
स्वातन्त्रवीर सावरकर	26 फरवरी
चन्द्रशेखर आजाद	27 फरवरी
डॉ0 राजेन्द्रप्रसाद	28 फरवरी

आवश्यक सूचना

मई+जून 2013 व 2014 दो वर्षों का वार्षिक विशेषांक **महाभारत के प्रेरक प्रसंग** 15/– पन्द्रह रूपये डाकव्यय की वी.पी.पी. से भेजना शुरू हो गया है। **'तपोभूमि'** के जिन सदस्यों (पाठकों) ने वर्ष दिसम्बर 2014 तक का वार्षिक शुल्क अभी तक जमा नहीं किया है वे शीघ्रातिशीघ्र **सत्य प्रकाशन** कार्यालय को जमा करायें अन्यथा अगले माह की पत्रिका व विशेषांक दोनों से वंचित रहना पड़ेगा।

उन पन्द्रह वर्षीय सदस्यों से भी निवेदन है कि वे भी अपना पुन: सदस्यता शुल्क शीघ्र ही जमा करायें ताकि पत्रिका व विशेषांक सहर्ष प्राप्त कर सकें।

आशा और विश्वास है कि आप शीघ्रातिशीघ्र शुल्क जमा करने का कष्ट करेंगे।

–व्यवस्थापक

thearyasamaj.org

नींद क्यों नहीं आती ?

लेखकः डॉ० सतीशचन्द्र मलिक

नींद हमारे लिए क्यों आवश्यक है?:– दिन भर व्यस्त रहने के बाद हमें कुछ थकान–सी प्रतीत होने लगती है तथा शरीर टूटने लगता है। हमारे शरीर के तंतु टूटते–बनते रहते हैं। अधिक कार्य करने से ये तंतु अधिक टूट जाते हैं तथा पूरी तरह से और नहीं बन पाते। तब अंग ढीले पड़ने लगते हैं और शारीरिक स्फूर्ति खत्म हो जाती है। रात के समय जब हम विश्राम करते हैं तब ये तंतु नये सिरे से बनने लगते हैं और हममें पुनः नयी चेतना का स्फुरण होता है। अतः शारीरिक शक्ति और स्फूर्ति के लिए नींद अत्यावश्यक है।

सामान्यतया कितनी देर सोना चाहिए?:– साधारणतया प्रत्येक व्यक्ति को सात घण्टे सोना चाहिए, परन्तु वैज्ञानिक अध्ययन तथा सर्वे से ज्ञात होता है कि नींद के लिए विशिष्ट घण्टे नियत नहीं किये जा सकते। कुछ लोग केवल पाँच घण्टे सोते हैं तो कुछ छह घण्टे या आठ–नौ घण्टे तक भी सोते हैं। अतः नींद के लिए कोई समय निर्धारित नहीं किया जा सकता। सर्वथा पृथक् रूप से व्यक्तियों पर निर्भर है। कुछेक ऐसे बुद्धिजीवियों के उदाहरण भी हैं जो केवल तीन–चार घण्टे ही सोते हैं और उनके स्वास्थ्य पर कोई बुरा प्रभाव नहीं पड़ता।

नींद न आये तो क्या करना चाहिए?:– प्रायः चिन्ताओं, उलझनों आदि के कारण नींद नहीं आती। हर समय मानसिक तनाव रहने के कारण रात भर करवटें बदलते रहते हैं। ऐसी स्थिति में तनाव से छुटकारा पाना चाहिए। यह तभी हो सकता है जब हम इन उलझनों की ओर ध्यान न देकर मन का ईश्वर परायणता की ओर केन्द्रित कर लें। सोने से पहले किसी धार्मिक पत्रिका या पुस्तक पढ़ने से अथवा संगीत आदि सुनने से तनाव की स्थिति समाप्त हो जाती है तथा अपने आप ही नींद आ जाती है।

क्या नींद की गोलियाँ या शराब का प्रयोग करना उचित है?:– कुछ लोग, जिन्हें नींद नहीं आती, नींद की गोलियां खाकर अथवा शराब पीकर सो जाते हैं। ये दोनों ही चीजें अत्यन्त हानिकर है। नींद की गोलियां खाकर सोने वाले व्यक्ति की देह धीरे–धीरे उन गोलियाँ की आदी होने लगती है। फिर प्रतिदिन के सेवन करने पर भी जब नींद नहीं आती तो वे मात्रा बढ़ाने लगते हैं, जो शरीर के लिए हानिकर साबित होती है।

क्या सोते समय गरम दूध पीने से अच्छी नींद आती है?:– वैज्ञानिक खोजों से पता चला है, दूध में अमोनिया एसिड होता है जो धीरे–धीरे अनिद्रा दूर करता है। अतः नींद की गोलियां खाकर सोने की अपेक्षा दूध पीकर सोना लाभदायक है।

thearyasamaj.org

क्या हमेशा निश्चित समय पर सोना चाहिए?:– प्रत्येक काम के लिए समय नियत कर लेना चाहिए। नींद के लिए तो यह और भी आवश्यक है। हमारे शरीर में 24 घण्टे एड्रीनल हारमोन का रक्त में मिश्रण होने के कारण शिराओं में रक्तप्रवाह एक विशिष्ट क्रम से होता है और हमारी कार्य करने की शक्तियाँ उसी के अनुसार बढ़ती–घटती रहती हैं। जब मनुष्य को थकावट होती है तो शरीर का तापमान कुछ गिर जाता है, किन्तु सोते समय यह तापमान बढ़ने लगता है तथा शक्ति पुनः लौट आती है। अतः असमय सोने से इस क्रम में परिवर्तन हो जाता है तथा देह का तापमान कम होकर पुनः बढ़ जाता है, परन्तु अब वह शरीर में नव शक्ति का सचरण न कर एक अजीव–सी बेचैनी उत्पन्न कर देता है। शरीर टूटने लगता है। ऐसी स्थिति में विशेष ध्यान देकर निश्चित समय पर सोयें।

पूरी नींद न आने पर क्या नुकसान हो सकता है?:– जो कोशिकाएं दिन भर कार्यरत रहती हैं वे नींद न आने से कमजोर होने लगती हैं। शरीर में जो तंतु टूटते–बनते रहते हैं अब पूर्णरूपेण कार्य नहीं करते शरीर भी ठीक ढंग से काम नहीं कर पाता। इन तंतुओं के टूटने से लाल रक्त–कणिकाएं कम हो जाती हैं तथा रोगों से लड़ने की शरीर की प्रतिरोध–शक्ति भी कम होने लगती है। फलतः हम बीमारियों के शिकार हो जाते हैं।

अच्छी नींद के लिए क्या शारीरिक श्रम आवश्यक है?:– अच्छी नींद के लिए मानसिक कार्य के साथ–साथ शारीरिक श्रम अत्यावश्यक है। अतः जिन लोगों को अधिक शारीरिक श्रम नहीं करना पड़ता उन्हें व्यायाम आदि करने से गहरी नींद आयेगी।

बुद्धिजीवियों को अक्सर अनिद्रा–रोग होता है। इसका क्या कारण है?:– कारण है मानसिक तनाव। उन्हें हर समय सोचने की आदत–सी पड़ जाती है तथा विचार उनका पीछा नहीं छोड़ते। अनिद्रा का कारण अत्यधिक भावुकता होती है। ❁❁❁

गूँगे नेत्र, अन्धी वाणी

लेखकः ब्रह्मदेवसिंह

अश्वारोही के वाण से विधा सूकर भागते–भागते जब ऋषि सत्यव्रत की कुटिया में जा छिपा तो ऋषि को सम्बोधित करते हुए राजा ने पूछा–'क्या आपने मेरे बाण से विंधे सूकर को देखा है?'

सत्यव्रत असमंजस में पड़ गए, हिंसा और असत्य का भयानक चित्र उनकी आँखों के सामने नाच उठा, वे मौन थे। नृपति ने पुनः प्रश्न किया–'बोलते क्यों नहीं, मौन क्यों हो? 'पर सत्यव्रत उसी तरह मौन रहे।

जानते नहीं मैं कौन हूँ? राज्य की सीमा में रहकर राजाज्ञा का उलंघन कर रहे हो !' –क्रोधावेश में नृपति ने कहा।

तभी सत्यव्रत बोले 'राजन् ! जिन नेत्रों ने सूकर को देखा है वे वाणी–विहीन है और जिस वाणी में बोलने की शक्ति है, वह नेत्रहीन है, उसने सूकर को नहीं देखा।'

ऋषि के चातुर्यपूर्ण वचनों ने राजा के अज्ञान का अपहरण कर लिया। राजा ने सत्यव्रत के चरण पकड़ लिए। सूकर के शरीर से विंधा हुआ वाण निकाल उसे स्वतंत्र कर दिया और सत्य एवं अहिंसा में दृढ़ प्रतिज्ञ हो अपने महल को लौट पड़े। ❁❁❁

thearyasamaj.org

राजा मणीचन्द्र की उदारता

बंगाल में गुष्करा एक छोटा–सा स्टेशन है। एक दिन रेलगाड़ी आकर स्टेशन पर खड़ी हुई। उतरने वाले झटपट उतरने लगे और चढ़ने वाले दौड़–दौड़कर गाड़ी में चढ़ने लगे। एक बुढ़िया भी गाड़ी से उतरी। उसने अपनी गठरी खिसका कर डिब्बे के दरवाजे पर तो करली थी, किन्तु बहुत चेष्टा करके भी उतार नहीं पाती थी। कई लोग गठरी को लांघते हुए डिब्बे में चढ़े और डिब्बे से उतरे। बुढ़िया ने कई लोगों से बड़ी दीनता से प्रार्थना की कि उसकी गठरी उसके सिर पर उठाकर रख दें, किसी ने उसकी बात पर ध्यान नहीं दिया। लोग ऐसे चले जाते थे, मानो बहिरे हों। गाड़ी छूटने का समय हो गया। बेचारी बुढ़िया इधर–उधर बड़ी व्याकुलता से देखने लगी। उसकी आँखों से टप–टप आँसू गिरने लगे।

एकाएक प्रथम श्रेणी के डिब्बे में बैठे एक सज्जन की दृष्टि बुढ़िया पर पड़ी। गाड़ी छूटने की घंटी बज चुकी थी किन्तु उन्होंने इसकी परवाह नहीं की। अपने डिब्बे से वे शीघ्रता से उतरे और बुढ़िया की गठरी उठाकर उन्होंने उसके सिर पर रखदी। वहाँ से बड़ी शीघ्रता से अपने डिब्बे में जाकर जैसे ही वे बैठे गाड़ी चल पड़ी। बुढ़िया सिर पर गठरी लिए उन्हें उन्हें आशीर्वाद दे रही थी–'बेटा ! भगवान् तेरा भला करें।

तुम जानते हो कि बुढ़िया की गठरी उठा देने वाले सज्जन कौन थे? वे कासिम बाजार के राजा मणीचन्द्र नन्दी थे जो उस गाड़ी से कलकत्ते जा रहे थे। सचमुच वे राजा थे, क्योंकि सच्चा राजा वह नहीं है जो धनी है या बड़ी सेना रखता है। सच्चा राजा वह है, जिसका हृदय उदार है, जो दीन–दुखियों और दुर्बलों की सहायता कर सकता है। ऐसे सच्चे राजा बनने का तुममें से सबको अधिकार है। तुम्हें इसके लिये प्रयत्न करना चाहिए। ❁❁❁

महाराज रघुपतिसिंह

एक दूसरे राज के सेनापति ने एक राजपूत दुर्ग पर घेरा डाल रक्खा। राजपूत नायक रघुपतिसिंह भागकर वन में चले गये थे। उनको जीवित या मृत पकड़ने वाले के लिए पुरस्कार की घोषणा हुई थी अचानक वन में समाचार मिला कि रघुपतिसिंह का पुत्र मरणासन्न है।

मरते पुत्र का मुख देखने की लालसा लेकर रघुपतिसिंह वन से लौटे। घेरा डालने वाली सेना के नायक के सामने जाकर उन्होंने कहा–'मुझे दुर्ग में जाने दीजिए। मरते पुत्र को देखकर आपके पास लौट आऊँगा। तब मुझे पकड़ लेना।'

सेनानायक हिचका–आप न लौटे तो?'

रघुपतिसिंह ने कहा–'राजपूत कभी झूठ नहीं बोलता है !

उन्हें दुर्ग में चले जाने दिया गया। रघुपतिसिंह पुत्र से मिल कर लौटे और वे सेनानायक के सामने खड़े हो गये–'अब मुझे पकड़ लो।

उन्हें लेकर सेनानायक अपने प्रधान सेनापति के पास पहुँचा। रघुपतिसिंह के आत्मसमर्पण का विवरण वह वीर सेनापति बोला–'आप स्वतंत्र हैं। ऐसे बहादुर और सच्चे वीर को मारकर मैं अपने हाथ गन्दे नहीं कर सकता।' ❁❁❁

thearyasamaj.org

होश खोना हो तो पियो!

वल्कल वस्त्र और मृगचर्म पहने हुए एक जटाधारी ब्राह्मण राजा सर्वमित्र के दरबार में पहुँचा। उसके हाथ में एक सुरापात्र था। जाते ही वह बोला–"ले लो, ले लो यह शराब ! जिसे लोक–परलोक की चिन्ता न हो, मौत का डर न हो, वह इसे ले सकता है, जरूर ले सकता है।"

राजा बड़ा शराबी था। खुद पीता, दूसरों को भी पिलाता। राजभर में अंधेर मचा हुआ था।

ब्राह्मण का यह वचन सुनकर और उसके चेहरे पर तेज देखकर राजा ने उसे प्रणाम किया। कहा–"ब्राह्मण देवता ! आप तो खूब सौदा कर रहे हैं। सभी तो अपनी चीज के गुण बताते हैं, पर आप तो उसके दोष बता रहे हैं। बड़े सत्यवादी हैं आप!"

ब्राह्मण बोला–"सर्वमित्र ! जो इसे पीता है, अपना होश खो बैठता है। उसे चाहे जो खिला दो। सड़क पर वह लड़खड़ाकर गिरता है। कुत्ते उसके मुँह में पेशाब करते हैं। ले लो, ले लो यह शराब! तुम इसे पीकर सड़क पर नंगे नाचोगे। तुम्हें बहू और बेटी में कोई भेद न जान पड़ेगा। स्त्री इसे पीकर पति को पेड़ में बाँधकर कोड़े लगवायेगी। इसे पीकर लाख वाले खाक में मिल जाते हैं। राजा लोग रंक बन जाते हैं। पाप की माँ है यह शराब! ले लो यह शराब!"

सर्वमित्र ब्राह्मण के पैरों पर गिर पड़ा। बोला–"धन्य हैं महाराज ! आपने मुझे शराब के सब अवगुण बता दिये। मैं अब कभी शराब न पिऊँगा। आपने मुझे इसके दोष ऐसे अच्छे ढंग से समझाये, जैसे बाप बेटे को समझाता है, गुरु चेले को। मैं पाँच गाँव, और दस रथ देता हूँ आपको पुरस्कार में।"

ब्राह्मण रूपधारी भगवान् बुद्ध बोले–"मुझे कुछ न चाहिए। तुम्हारा पतन मुझसे नहीं देखा जाता, इसी से मैं ऐसा रूप धारणकर तुम्हें बचाने आया।" –(जातक कथा) ❁❁❁

पाठकों से नम्र निवेदन

'तपोभूमि' मासिक पत्रिका के उन पाठकों से निवेदन है जिन्होंने वर्ष 2014 का वार्षिक शुल्क 150/– एक सौ पचास रुपये अभी तक जमा नहीं कराया है वे शीघ्र ही **'सत्य प्रकाशन'** के पते पर कार्यालय को भेजकर जमा करायें ताकि पत्रिका सुचारू रूप से आपको प्राप्त होती रहे। **–व्यवस्थापक**

सत्साहित्य का प्रचार–प्रसार राष्ट्र की सर्वोत्तम सेवा है।

thearyasamaj.org

फार्म–4

नियम 8 देखिये

1.	प्रकाशन का स्थान	मथुरा
2.	प्रकाशन की अवधि	मासिक
3.	मुद्रक का नाम	रमेश प्रिंटिंग प्रेस
	(क्या भारत का नागरिक है)	हाँ
	(विदेशी है तो मूल देश)	नहीं
	पता	रमेश प्रिंटिंग प्रेस, पंचवटी, मथुरा
4.	प्रकाशक का नाम	आचार्य स्वदेश
	(क्या भारत का नागरिक है)	हाँ
	(विदेशी है तो मूल देश)	नहीं
	पता	सत्य प्रकाशन, वृन्दावन मार्ग, मथुरा
5.	सम्पादक का नाम	आचार्य स्वदेश
	(क्या भारत का नागरिक है)	हाँ
	(विदेशी है तो मूल देश)	नहीं
	पता	सत्य प्रकाशन, वृन्दावन मार्ग, मथुरा

6. उन व्यक्तियों के नाम व पते जो समाचार पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूँजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार या हिस्सेदार हों।

मैं आचार्य स्वदेश एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिये गये विवरण सत्य हैं।

मथुरा
दिनांक 14 फरवरी 2015

(आचार्य स्वदेश)
प्रकाशक के हस्ताक्षर

'तपोभूमि' मासिक पत्रिका मंगाने हेतु

एक वर्ष के लिए 150/– एक सौ पचास रुपये वार्षिक शुल्क,

पन्द्रह वर्ष के लिए 1500/– एक हजार पाँच सौ रुपये

आज ही भेजिये।

thearyasamaj.org

॥ ओउ्म्॥

श्री गुरू विरजानन्द आर्ष गुरूकुल वेद मन्दिर मथुरा में ऋषि बोधोत्सव

101 कुण्डीय यज्ञ का भव्य आयोजन
दिनांक 16, 17 फरवरी 2015

सज्जनो !

प्राय: सांसारिक बन्धनों में जकड़े गृहस्थ जीवन में मनुष्य जीवन के वास्तविक उद्देश्य से विमुख हो जाता है। अज्ञानतावश अपने ही विपरीत कर्मों से दुखों के द्वार खोल लेता है। इस बात को ध्यान में रखकर सर्वजन के हितचिन्तक ऋषियों ने सबके कल्याण की भावना से अनेक प्रकार के यत्न किये हैं। उन प्रयत्नों में ही धार्मिक आयोजनों की योजना रखी। इन धार्मिक आयोजनों के बहाने से व्यक्ति समय निकालकर यज्ञादि शुभ कर्म में प्रेरित हो जाता है। विद्वानों के उपदेश सुनकर अपना कल्याण करने में समर्थ हो जाता है। इसी भावना से प्रेरित होकर आपके अपने ही श्री गुरू विरजानन्द आर्ष गुरूकुल, वेदमन्दिर, मथुरा में प्रतिवर्ष महाशिवरात्रि पर्व ऋषि बोधोत्सव के रूप में मनाया जाता है। 101 कुण्डीय यज्ञ भी सर्वकल्याण की कामना से रखा जाता है। आप भी इस पावन अवसर पर सपरिवार यजमान के रूप में पधारें ऐसी हमारी कामना है। अति सुन्दर हो यदि आप भारतीय वेश-भूषा में आयें। यजमान बनने के इच्छुकजन अपने साथ घी, कटोरी, कपूर, दियासलाई, चम्मच, लोटा अवश्य लायें, जिससे यज्ञ करने में सुविधा हो। यदि न ला सकें तो यह व्यवस्था यहाँ भी रहेगी। 16, 17 फरवरी तदनुसार सोमवार व मंगलवार 2015 को प्रात: 8 बजे आप यज्ञ स्थल पर अवश्य आ जायें। 101 कुण्डीय यज्ञ 17 फरवरी को होगा। यज्ञ के बाद भण्डारे की व्यवस्था है प्रसाद भी यहीं ग्रहण करें। पुन: नगर कीर्तन 2 बजे से शोभायात्रा के रूप में होगा। अत: इस पावन सुअवसर को हाथ से न जानें दे।

कर यज्ञ यथावत दान करे, फल सौगुन होय ऋषि बतलाते।
दु:ख दूर करे दुखिया जन के, उसके करता सुख-साधन पाते।।
सद्पात्र विचार करे धन दान, मिलें फल जो न कभी मिट पाते।
सब प्राणिन को भय हीन करे, उसके फल की गणना न बताते।।

उत्सव की सफलता का दायित्व आप सभी याज्ञिक जनों पर है। अत: सभी सांसारिक कार्यों को विराम देकर आयोजन को सफल बनाकर पुण्य के भागी बनें।

निवेदक:

प्रधान	मंत्री	अधिष्ठाता
(डॉ0 सत्यप्रकाश अग्रवाल)	**(बृजभूषण अग्रवाल)**	**(आचार्य स्वदेश)**

सम्पर्क सूत्र-9456811519

thearyasamaj.org

अशान्ति व्याप्त हो जाती है। सामाजिक समरसता को बनाए रखने के लिए व्यक्ति का सत्यनिष्ठ होना अतिआवश्यक है। हम स्वयं ही अपने जीवन में सत्यनिष्ठा रखें और जहाँ कहीं पर भी सत्य की हानि हो उसका विरोध प्राणपणता से करें। यही मानव धर्म है और महापुण्य का कार्य है। जितने भी समाजसुधारक हुए सभी ने सत्य की स्थापना के लिए आजीवन घोर कष्ट सहते हुए संघर्ष किया और सत्य को ही सर्वोपरि सम्मान दिया। महात्मा कबीर ने तो यहाँ तक कहा है कि–

साँच बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप।
जाके हृदय साँच है, ताके हृदय आप।।

गोस्वामी तुलसीदास ने भी इसी बात को दोहराया है कि–

धर्म न दूसर सत्य समाना, आगम निगम पुराण बखाना।

युगदृष्टा महर्षि दयानन्द सरस्वती महाराज ने तो अपने ग्रन्थ की रचना करते हुए उसका नाम सत्यार्थ प्रकाश रखा। सर्वहितकारी संगठन आर्यसमाज की स्थापना करते हुए जो नियम निर्धारित किये हैं उनमें प्रथम पाँच नियमों में सत्य शब्द का ही समावेश किया। सारी मानव जाति के उत्थान का मूल स्वामीजी ने सत्य का स्वीकार करना ही बताया। पर दुर्भाग्य का विषय है कि सत्य की स्थापना और उसके प्रचार–प्रसार के लिए स्थापित संगठन आर्यसमाज ही आज असत्याचरण से युक्त व्यक्तियों के हाथों में चला गया और अपने तेजस्वी रूप को खोकर सर्वथा निस्तेज हो गया। आज आवश्यक है कि ऐसे प्रबुद्ध लोग आगे बढ़करके आयें और सामान्य कार्यकर्ता को सत्य स्थापना के संघर्ष के लिए प्रेरित करें।

जो लोग दुराचारी सत्य से दूर कुपथगामी हैं, उनका सर्वथा बहिष्कार किया जाए, जो आज दुर्भाग्यवश सम्मानित हो रहे हैं। उन्हें अपमानित किया जाए। इस प्रवृत्ति को समाप्त किया जाए जो उदासीन होकर एक तरफ हो जाने की है। विशेषकर आर्यों को तो अवश्य ही आत्मचिन्तन करना चाहिए कि निहित स्वार्थों के लिए पूरे संगठन को बरबाद करने वालों का सम्मान करके घोर पाप के भागी न बनें क्योंकि तटस्थ होकर या उसका समर्थन करके हम उतने ही अपराध के भागी होते हैं कि जितना अपराध करने वाला। राष्ट्रकवि दिनकर ने ठीक ही लिखा है कि–

समर शेष है नहीं पाप का भागी केवल व्याध।
जो तटस्थ है समय लिखेगा उनका भी अपराध।।

जीवन की इस सच्चाई को हृदयंगम करते हुए हम इस बात के लिए यदि तैयार हो जाएं कि हमें हर परिस्थिति में सत्य की स्थापना करनी ही है, तो निश्चित रूप से आज का मार–काट से युक्त भयावह वातावरण समाप्त हो जाएगा और सब को समान विकास का अवसर प्राप्त होगा। ऐसा सुरम्य वातावरण होगा, जिसको हम स्वर्ग नाम से प्रस्तुत करते हैं। सत्य के समर्थन में खड़े न होना अपने स्वार्थ को देखकर मौन रह जाना आपके मानवीय जीवन पर घोर कलंक है। मौन होकर के सत्य की हत्या का पाप आपके सिर पर आयेगा। जो आपका तो नाश करेगा ही साथ में आपके मनुष्य जीवन को भी खो देगा। मूक प्राणी बनकर असहाय जन्म आपको मिलेगा। ऐसी दुर्गति को हम प्राप्त न हों। अतः संसार की सामान्य हानियों की चिन्ता छोड़कर सर्वहित की भावना मन में रखकर सत्य के पक्ष में संघर्ष करना चाहिए। इसी में मानव जीवन की सफलता है। इसी से संसार के दुःख दूर होंगे। महर्षि दयानन्द जी ने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि–

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षाः सत्यव्रता रहितमानमलापहाराः।
संसारदुःखदलनेन सुभूषिता ये धन्या नरा विहितकर्मपरोपकाराः।।

जिन पुरुषों का मन विद्या के विलास में तत्पर रहता, सुन्दरशील स्वभावयुक्त, सत्यभाषणादि नियम पालन युक्त और अभिमान अपवित्रता से रहित, अन्य की मलीनता के नाशक, सत्योपदेशक, विद्यादान से संसारी जनों के दुःखों के दूर करने से सुभूषित, वेदविहित कर्मों से पराये उपकार करने में रहते हैं, वे नर और नारी धन्य हैं। ❀❀❀

thearyasamaj.org

'तपोभूमि' फरवरी 2015 R.N.I. No. 2321/57 रजि. सं. MTR नं. 04/2013-15

सत्य प्रकाशन मथुरा के अनमोल प्रकाशन

शुद्ध रामायण (प्रेस में)		शुद्ध सत्यनारायण कथा	10.00
शंकर सर्वस्व	120.00	महिला गीतांजलि	10.00
मानस पीयूष (रामचरित मानस)	100.00	क्या भूत होते हैं	10.00
नारी सर्वस्व	60.00	आर्यों की दिनचर्या	10.00
शुद्ध कृष्णायण	50.00	महाभारत के कृष्ण	8.00
शुद्ध हनुमच्चरित (प्रेस में)		ब्रजभूमि और कृष्ण	8.00
संस्कार चन्द्रिका प्रथम भाग	40.00	सच्चे गुच्छे	8.00
विदुर नीति	40.00	मृतक भोज और श्राद्ध तर्पण	8.00
वैदिक स्वर्ग की झांकियाँ	40.00	नवग्रह समीक्षा	6.00
चाणक्य नीति	40.00	आर्यसमाज और श्रीराम	6.00
महाभारत के प्रेरक प्रसंग	40.00	आचार्य श्रीराम शर्मा : एक सरल चिन्तन	5.00
वेद प्रभा	30.00	वृक्षों में जीव है या नहीं	5.00
शान्ति कथा	30.00	गायत्री गौरव	5.00
नित्य कर्म विधि	30.00	महर्षि दयानन्द की मान्यतायें	5.00
संगीत रत्नाकर प्रथम भाग	25.00	सफल व्यक्तित्व	5.00
बाल सत्यार्थ प्रकाश	25.00	सर्वश्रेष्ठ कहानियाँ	5.00
यज्ञमय जीवन (प्रेस में)		मुक्ति प्रदाता त्रिवेणी	5.00
दो बहिनों की बातें	25.00	जीजा साले की बातें	5.00
दो मित्रों की बातें	25.00	भागवत के नमकीन चुटकुले	5.00
मील का पत्थर (प्रेस में)		आदर्श पत्नी	5.00

आवश्यक सूचना

1. पाठकगण वर्ष 2015 के लिये वार्षिक शुल्क 150/- रूपये अविलम्ब भिजवायें तथा पन्द्रह वर्ष की सदस्यता हेतु 1500/- भिजवायें।
2. पत्रिका भेजने की तारीख प्रतिमाह 7 व 14 है, कृपया ध्यान रखें।

बुक-पोस्ट
छपी पुस्तक/पुस्तिका

सेवा में,

....

....

....

....

.... पिन कोड ....

पत्र व्यवहार का पता :-
व्यवस्थापक - कन्हैयालाल आर्य
सत्य प्रकाशन
डाकघर- गायत्री तपोभूमि, वृन्दावन मार्ग
(आचार्य प्रेमभिक्षु मार्ग), मसानी चौराहे के पास,
मथुरा (उ० प्र०) 281003
फोन (0565) 2406431
मो. 9759804182

Yogendra # 9927136600

स्वामी, प्रकाशक, सम्पादक आचार्य स्वदेश के लिए रमेश प्रिन्टिग प्रेस, पंचवटी, मथुरा में छपकर सत्य प्रकाशन मथुरा से प्रकाशित